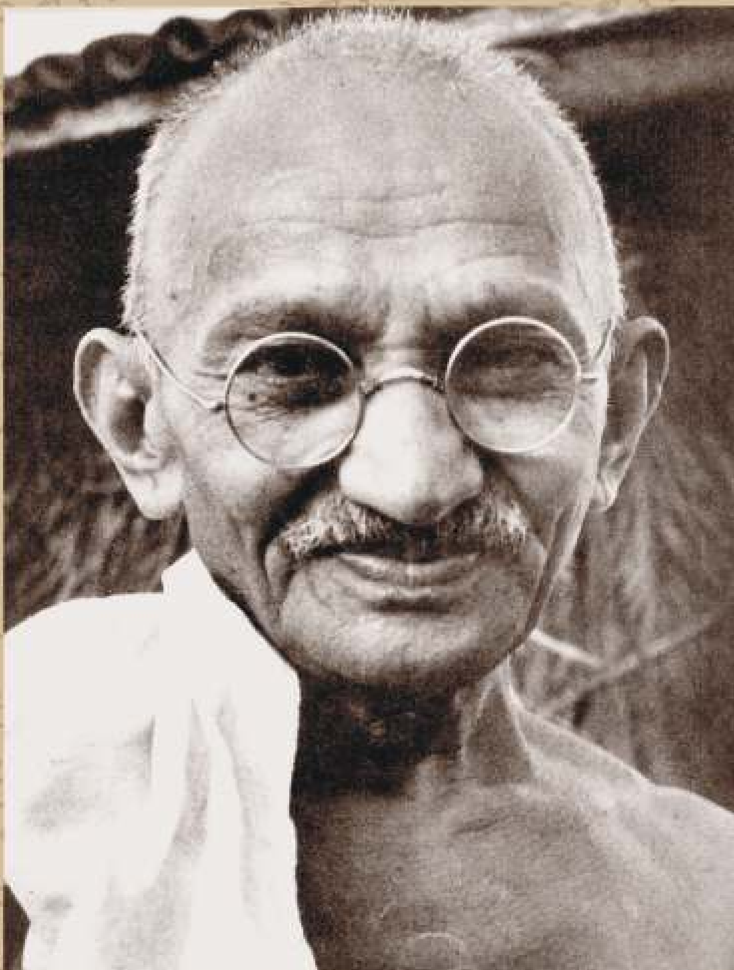


हिन्द स्वराज्य

हिन्द स्वराज्य

महात्मा गांधी

हिन्द स्वराज्य के सौ वर्ष पूरे होने पर विशिष्ट प्रकाशन

मूल्य

अनमोल चीज़ों का कोई मूल्य नहीं होता

प्रकाशक और वितरक

'हिन्द' के 'स्वराज्य' की तलाश में यहां–वहां
जुटे साथी और उनके कुछ शुभचिंतक

हिन्द स्वराज्य की जरूरत

गांधीजी ने अपने जीवन में लाखों पत्र अवश्य लिखे लेकिन पुस्तकें ज्यादा नहीं लिखीं। उनकी जो बातें हम पढ़ते हैं वो अधिकत्तर उनके भाषणों तथा बातचीत आदि के हिस्से हैं। उन्होंने बहुत कम लिखा लेकिन उस कम में हिन्द स्वराज्य की गिनती प्रमुख है।

यह पुस्तक भी 1909 में उन्होंने उस समय लिखी जब उनका प्रवेश भारतीय राजनीति में पूरी तरह हुआ भी नहीं था। फिर भी यह छोटी सी पुस्तक गांधीजी की आत्मा कही जाती है।

आज इस पुस्तक को लिखे 100 वर्ष पूरे हो गये हैं। शताब्दी वर्ष के निमित्त देश और दुनिया में हिन्द स्वराज्य में लिखे गये विचारों का विस्तार से विश्लेषण हुआ है। अनेक विद्वानों ने, चिन्तकों ने, ज़मीन पर काम करने वाले लोगों ने, जन प्रतिनिधियों ने अपने-अपने ढंग से इस पुस्तक की प्रासंगिकता पर खूब प्रकाश डाला है। सभी ने एक स्वर में कहा है कि आज पूरी दुनिया और हमारा देश जिस तरह से संकटों से गुज़र रहा है उनसे संभलने का एक ही रास्ता है, वह है हिन्द स्वराज्य।

देश और दुनिया के आगे ध्रुव तारा सा बन गई इस पुस्तक को अपने मूल स्वरूप में प्रकाशित करने का हमारा मकसद केवल इतना ही है कि हमारे लोग आर्थिक, राजनीतिक संकट के इस कठिन दौर में इस पुस्तक से प्रेरणा लेकर अपने-अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने की दिशा में क़दम उठाएं।

शताब्दी वर्ष के निमित्त हिन्द स्वराज्य के मूल पाठ को आपके हाथ में देते हुए हमें धन्यता का अनुभव हो रहा है।

संदेश

जिन सिद्धान्तों के समर्थन के लिए हिन्द स्वराज्य लिखी गईऍथी, उन सिद्धान्तों की आप जाहिरात करना चाहती हैं, यह मुझे अच्छा लगता है। मूल पुस्तक गुजराती में लिखी गई थी, अंग्रेज़ी आवृत्ति गुजराती का तरजुमा है।ऍयह पुस्तक अगर आज मुझे फिर से लिखनी हो तो कहीं-कहीं मैं उसकी भाषा बदलूंगा। लेकिन इसे लिखने के बाद जो तीस साल मैंने अनेक आंधियों में बिताए हैं, उनमें मुझे इस पुस्तक में बताये हुए विचारों में फेरबदल करने का कुछ भी कारण नहीं मिला। पाठक इतना ख़्याल रखें कि कुछ कार्यकर्त्ताओं के साथ, जिनमें एक कट्टर अराजकतावादी थे, मेरी जो बातें हुई थीं, वे जैसी की तैसी मैंने इस पुस्तक में दे दी हैं। पाठक इतना भी जान लें कि दक्षिण अफ्रीका के हिन्दुस्तानियों में जो सड़न दाखिल होने वाली ही थी, उसे इस पुस्तक ने रोका था। इसके विरुद्ध दूसरे पल्ले में रखने के लिए पाठक मेरे एक स्वर्गीय मित्र की यह राय भी जान लें कि 'यह एक मूर्ख आदमी की रचना है।'



मोहनदास करमचंद गांधी

सेवाग्राम 14.7.38

अंग्रेजी मासिक 'आर्यन पाथ' के सितम्बर 1938 में 'हिन्द स्वराज्य अंक' के लिए भेजा हुआ संदेश।

प्रस्तावना

इस विषय पर मैंने जो बीस अध्याय लिखे हैं, उन्हें पाठकों के सामने रखने की मैं हिम्मत करता हूं। जब मुझसे रहा ही नहीं गया तभी मैंने यह लिखा है। बहुत पढ़ा, बहुत सोचा। विलायत में ट्रान्सवाल डेप्युटेशन के साथ मैं चार माह रहा, उस बीच हो सका उतने हिन्दुस्तानियों के साथ मैंने सोच-विचार किया, हो सका उतने अंग्रेज़ों से भी मैं मिला। अपने जो विचार मुझे आखिरी मालूम हुए, उन्हें पाठकों के सामने रखना मैंने अपना फ़र्ज़ समझा। इण्डियन ओपीनियन के गुजराती ग्राहक आठ सौ के करीब हैं। हर ग्राहक के पीछे कम से कम दस आदमी दिलचस्पी से यह अखबार पढ़ते हैं, ऐसा मैंने महसूस किया है। जो गुजराती नहीं जानते, वे दूसरों से पढ़वाते हैं। इन भाइयों ने हिन्दुस्तान की हालत के बारे में मुझसे बहुत सवाल किये हैं। ऐसे ही सवाल मुझसे विलायत में किये गये थे। इसलिए मुझे लगा कि जो विचार मैंने यों खानगी में बताए उन्हें सबके सामने रखना गलत नहीं होगा।

जो विचार यहां रखे गये हैं, वे मेरे हैं और मेरे नहीं भी हैं। वे मेरे हैं, क्योंकि उनके मुताबिक बरतने की मैं उम्मीद रखता हूं, वे मेरी आत्मा में गढ़े-जड़े हुए जैसे हैं। वे मेरे नहीं हैं, क्योंकि सिर्फ मैंने ही उन्हें सोचा हो सो बात नहीं। कुछ किताबें पढ़ने के बाद वे बने हैं। दिल में भीतर ही भीतर मैं जो महसूस करता था, उसका इस किताब ने समर्थन किया। यह साबित करने की ज़रूरत नहीं कि जो विचार मैं पाठकों के सामने रखता हूं, वे हिन्दुस्तान में जिन पर पश्चिमी सभ्यता की धुन सवार नहीं हुई है ऐसे बहुतेरे हिन्दुस्तानियों के हैं। लेकिन यही विचार यूरोप के हज़ारों लोगों के हैं, यह मैं अपने पाठकों के मन में अपने सबूतों से ही जंचाना चाहता हूं। जिसे इसकी खोज करनी हो, जिसे ऐसी फ़ुर्सत हो, वह आदमी वे किताबें देख सकता है। अपनी फ़ुर्सत से उन किताबों में से कुछ न कुछ पाठकों के सामने रखने की मेरी उम्मीद है।

इण्डियन ओपीनियन के पाठकों या औरों के मन में मेरे लेख पढ़कर जो विचार आये, उन्हें अगर वे मुझे बतायेंगे तो मैं उनका आभारी रहूंगा।

उद्देश्य सिर्फ देश की सेवा करने का और सत्य की खोज करने का और उसके मुताबिक बरतने का है। इसलिए अगर मेरे विचार गलत साबित हों, तो उन्हें पकड़ रखने का मेरा आग्रह नहीं है। अगर वे सच साबित हों तो दूसरे लोग भी उनके मुताबिक बरतें, ऐसी देश के भले के लिए साधारण तौर पर मेरी भावना रहेगी। सुभीते के लिए लेखों को पाठक और संपादक के बीच के संवाद का रूप दिया गया है।

मोहनदास करमचंद गांधी
किलडोनन कैसल,
22.11.1909



**यह किताब द्वेष धर्म की जगह प्रेम धर्म सिखाती है;
हिंसा की जगह आत्म–बलिदान को रखती है;
पशुबल से टक्कर लेने के लिए आत्मबल
को खड़ा करती है। यह किताब बालक
के हाथ में भी दी जा सकती है।**

हिन्द स्वराज्य



अगर किसी मक़सद के लिए खड़े हो तो एक पेड़ की तरह रहो और गिरो तो बीज की तरह गिरो ताकि दुबारा उग कर उसी मक़सद के लिए संघर्ष कर सको।

कांग्रेस और उसके कर्ता–धर्ता

पाठक : आजकल हिंदुस्तान में स्वराज्य की हवा चल रही है। सब हिंदुस्तानी आज़ाद होने के लिए तरस रहे हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी वही जोश दिखाई दे रहा है। हिंदुस्तानियों में अपने हक पाने की बड़ी हिम्मत आई हुई मालूम होती है। इस बारे में क्या आप अपने ख़्याल बताएंगे?

संपादक : आपने सवाल ठीक पूछा है, लेकिन इसका जवाब देना आसान बात नहीं है। अखबार का एक काम तो है लोगों की भावनाएँ जानना और उन्हें ज़ाहिर करना, दूसरा काम है लोगों में अमुक ज़रूरी भावनाएँ पैदा करना और तीसरा काम है लोगों में दोष हों तो चाहे जितनी मुसीबतें आने पर बेधड़क होकर उन्हें दिखाना। आपके सवाल का जवाब देने में ये तीनों काम साथ–साथ आ जाते हैं। लोगों की भावनाएँ कुछ हद तक बतानी होंगी, न हों वैसी भावनाएँ उनमें पैदा करने की कोशिश करनी होगी और उनके दोषों की निंदा भी करनी होगी। फिर भी आपने सवाल किया है, इसलिए उसका जवाब देना मेरा फर्ज़ मालूम होता है।

अगर दूसरे की इज़्जत करने की आदत हम खो बैठें, तो हम निकम्मे हो जाएँगे। जो प्रौढ़ और तजरबेकार हैं, वे ही स्वराज्य भुगत सकते हैं, न कि बे–लगाम लोग।

पाठक : क्या स्वराज्य की भावना हिन्द में पैदा हुई आप देखते हैं?

संपादक : वह तो जबसे नेशनल कांग्रेस कायम हुई तभी से देखने में आई है। 'नेशनल' शब्द का अर्थ ही वह विचार ज़ाहिर करता है।

पाठक : यह तो आपने ठीक नहीं कहा। नौजवान हिन्दुस्तानी आज कांग्रेस की परवाह ही नहीं करते। वे तो उसे अंग्रेजों का राज्य निभाने का साधन मानते हैं।

संपादक : नौजवानों का ऐसा ख़्याल ठीक नहीं है। हिन्द के दादा दादाभाई नौरोजी ने ज़मीन तैयार नहीं की होती तो नौजवान आज जो बातें कर रहे हैं वह भी नहीं कर पाते। मि. ह्यूम ने जो लेख लिखे, जो फटकारें हमें सुनाईं, जिस जोश से हमें जगाया, उसे कैसे भुलाया जाए? सर विलियम वेडरबर्न ने

कांग्रेस का मकसद हासिल करने के लिए अपना तन, मन और धन सब दे दिया था। उन्होंने अंग्रेजी राज्य के बारे में जो लेख लिखे हैं, वे आज भी पढ़ने लायक हैं। प्रोफेसर गोखले ने जनता को तैयार करने के लिए भिखारी के जैसी हालत में रहकर अपने बीस साल दिये हैं। आज भी वे गरीबी में रहते हैं। मरहूम जस्टिस बदरुद्दीन ने भी कांग्रेस के ज़रिये स्वराज्य का बीज बोया था। यों बंगाल, मद्रास, पंजाब वगैरा में कांग्रेस का और हिंद का भला चाहने वाले कई हिन्दुस्तानी और अंग्रेज लोग हो गये हैं, यह याद रखना चाहिए।

पाठक : ठहरिये, ठहरिये। आप तो बहुत आगे बढ़ गये। मेरा सवाल कुछ है और आप जवाब कुछ और दे रहे हैं। मैं स्वराज्य की बात करता हूँ और आप परराज्य की बात करते हैं। मुझे अंग्रेजों का नाम तक नहीं चाहिए और आप तो अंग्रेजों के नाम देने लगे। इस तरह तो हमारी गाड़ी राह पर आये, ऐसा नहीं दिखता। मुझे तो स्वराज्य की ही बातें अच्छी लगती हैं। दूसरी मीठी सयानी बातों से मुझे संतोष नहीं होगा।

कर्त्तव्य पालन में से ही हक पैदा होता है। हम बड़ी बातों को मत सोचें, अच्छी बातें सोचें।

संपादक : आप अधीर हो गये हैं। मैं अधीरपन बरदाश्त नहीं कर सकता। आप जरा सब्र करेंगे तो आपको जो चाहिए वही मिलेगा। 'उतावली से आम नहीं पकते, दाल नहीं चुरती' यह कहावत याद रखिए। आपने मुझे रोका और आपको हिन्द पर उपकार करने वालों की बात भी सुननी अच्छी नहीं लगती, यह बताता है कि अभी आपके लिए स्वराज्य दूर है। आपके जैसे बहुत से हिन्दुस्तानी हों तो हम स्वराज्य से दूर हटकर–पिछड़ जाएँगे। वह बात जरा सोचने लायक है।

पाठक : मुझे तो लगता है कि ये गोल–मोल बातें बनाकर आप मेरे सवाल का जवाब उड़ा देना चाहते हैं। आप जिन्हें हिन्दुस्तान पर उपकार करने वाले मानते हैं, उन्हें मैं ऐसा नहीं मानता, फिर मुझे किसके उपकार की बात सुननी है? आप जिन्हें हिन्द के दादा कहते हैं, उन्होंने क्या उपकार किया? वे तो कहते हैं कि अंग्रेज राजकर्ता न्याय करेंगे और उनसे हमें हिलमिल कर रहना चाहिए।

संपादक : मुझे सविनय आपसे कहना चाहिए कि उस पुरुष के बारे में आपका बेअदबी से यों बोलना हमारे लिए शर्म की बात है। उनके कामों की

ओर देखिए। उन्होंने अपना जीवन हिन्द को अर्पण कर दिया है। उनसे यह सबक हमने सीखा। हिन्द का खून अंग्रेजों ने चूस लिया है, यह सिखाने वाले माननीय दादाभाई हैं। आज उन्हें अंग्रेजों पर भरोसा है उससे क्या ? हम जवानी के जोश में एक कदम आगे रखते हैं, इससे क्या दादाभाई कम पूज्य हो जाते हैं ? इससे क्या हम ज्यादा ज्ञानी हो गये ? जिस सीढ़ी से हम ऊपर चढ़े उसको लात न मारने में ही बुद्धिमानी है। अगर वह सीढ़ी निकाल दें तो सारी निसैनी (सीढ़ी) गिर जाए, यह हमें याद रखना चाहिए। हम बचपन से जवानी में आते हैं तब बचपन से नफरत नहीं करते, बल्कि उन दिनों को प्यार से याद करते हैं। बरसों तक अगर मुझे कोई पढ़ाता है और उससे मेरी जानकारी जरा बढ़ जाती है, तो इससे मैं अपने शिक्षक से ज्यादा ज्ञानी नहीं माना जाऊंगा, अपने शिक्षक को तो मुझे मान देना ही पड़ेगा। इसी तरह हिन्द के दादा के बारे में समझाना चाहिए। उनके पीछे सारी हिन्दुस्तानी जनता है, यह तो हमें कहना ही पड़ेगा।

जिस सीढ़ी से हम ऊपर चढ़े उसको लात न मारने में ही बुद्धिमानी है। अगर वह सीढ़ी निकाल दें तो सारी निसैनी (सीढ़ी) गिर जाए, यह हमें याद रखना चाहिए। हम बचपन से जवानी में आते हैं तब बचपन से नफरत नहीं करते, बल्कि उन दिनों को प्यार से याद करते हैं।

पाठक : यह आपने ठीक कहा। दादाभाई नौरोजी की इज्जत करना चाहिए, यह तो समझ सकते हैं। उन्होंने और उनके जैसे दूसरे पुरुषों ने जो काम किये हैं, उनके बगैर हम आज का जोश महसूस नहीं कर पाते, यह बात ठीक लगती है, लेकिन यही बात प्रोफेसर गोखले साहब के बारे में हम कैसे मान सकते हैं ? वे तो अंग्रेजों के बड़े भाईबंद बनकर बैठे हैं, वे तो कहते हैं कि अंग्रेजों से हमें बहुत कुछ सीखना है। अंग्रेजों की राजनीति से हम वाकिफ़ हो जाएँ, तभी स्वराज्य की बातचीत की जाए। उन साहब के भाषणों से तो मैं ऊब गया हूँ।

संपादक : आप ऊब गये हैं, यह दिखाता है कि आपका मिज़ाज उतावला है, लेकिन जो नौजवान अपने माँ–बाप के ठंडे मिज़ाज से ऊब जाते हैं और वे (माँ–बाप) अगर अपने साथ न दौड़ें तो गुस्सा होते हैं, वे अपने माँ–बाप का अनादर करते हैं ऐसा हम समझते हैं। प्रोफेसर गोखले के बारे में भी ऐसा ही समझना चाहिए। क्या हुआ अगर प्रोफेसर गोखले हमारे साथ नहीं दौड़ते हैं ? स्वराज्य भुगतने की इच्छा रखने वाली प्रजा अपने बुजुर्गों का तिरस्कार

नहीं कर सकती। अगर दूसरे की इ़ज्जत करने की आदत हम खो बैठें, तो हम निकम्मे हो जाएँगे। जो प्रौढ़ और तजुरबेकार हैं, वे ही स्वराज्य भुगत सकते हैं, न कि बे-लगाम लोग। और देखिये कि जब प्रोफेसर गोखले ने हिन्दुस्तान की शिक्षा के लिए त्याग किया तब ऐसे कितने हिन्दुस्तानी थे? मैं तो खासतौर पर मानता हूँ कि प्रोफेसर गोखले जो कुछ भी करते हैं वह शुद्ध भाव से और हिन्दुस्तान का हित मानकर करते हैं। हिन्द के लिए अगर अपनी जान भी देनी पड़े तो वे दे देंगे, ऐसी हिन्द के लिए उनकी भक्ति है। वे जो कुछ कहते हैं वह किसी की खुशामद करने के लिए नहीं, बल्कि सही मानकर कहते हैं। इसलिए हमारे मन में उनके लिए पूज्य भाव होना चाहिए।

सारे के सारे अंग्रेज बुरे हैं, ऐसा तो मैं नहीं मानूँगा। बहुत से अंग्रेज चाहते हैं कि हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिले। उस प्रजा में स्वार्थ ज्यादा है यह ठीक है, लेकिन उससे हर एक अंग्रेज बुरा है ऐसा साबित नहीं होता।

पाठक : तो क्या वे साहब जो कहते हैं उसके मुताबिक हमें भी करना चाहिए?

संपादक : मैं ऐसा कुछ नहीं कहता। अगर हम शुद्ध बुद्धि से अलग राय रखते हैं तो उस राय के मुताबिक चलने की सलाह खुद प्रोफेसर साहब हमें देंगे। हमारा मुख्य काम तो यह है कि हम उनके कामों की निन्दा न करें, हमसे वे महान हैं ऐसा मानें और यकीन रखें कि उनके मुकाबले में हमने हिन्द के लिए कुछ भी नहीं किया है। उनके बारे में कुछ अखबार जो अशिष्टतापूर्वक लिखते हैं उसकी हमें निन्दा करनी चाहिए और प्रोफेसर गोखले जैसों को हमें स्वराज्य के स्तंभ मानना चाहिए। उनके ख़्याल ग़लत और हमारे ही सही हैं, या हमारे ख़्याल के मुताबिक़ न बरतने वाले देश के दुश्मन हैं, ऐसा मान लेना बुरी भावना है।

पाठक : आप जो कुछ कहते हैं वह अब मेरी समझ में कुछ आता है। फिर भी मुझे उसके बारे में सोचना होगा। पर मि. ह्यूम, सर विलियम वेडरबर्न वगैरा के बारे में आपने जो कहा उसमें तो हद हो गई।

संपादक : जो नियम हिन्दुस्तानियों के बारे में है, वही अंग्रेजों के बारे में समझना चाहिए। सारे के सारे अंग्रेज बुरे हैं, ऐसा तो मैं नहीं मानूँगा। बहुत से अंग्रेज चाहते हैं कि हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिले। उस प्रजा में स्वार्थ ज्यादा है यह ठीक है, लेकिन उससे हर एक अंग्रेज बुरा है ऐसा साबित नहीं

होता। जो हक, न्याय चाहते हैं, उन्हें सबके साथ न्याय करना होगा। सर विलियम हिन्दुस्तान का बुरा चाहने वाले नहीं हैं, इतना हमारे लिये काफी है। ज्यों-ज्यों हम आगे बढ़ेंगे त्यों-त्यों आप देखेंगे कि अगर हम न्याय की भावना से काम लेंगे, तो हिन्दुस्तान का छुटकारा जल्दी होगा। आप यह भी देखेंगे कि अगर हम तमाम अंग्रेजों से द्वेष करेंगे, तो उससे स्वराज्य दूर ही जाने वाला है, लेकिन अगर उनके साथ भी न्याय करेंगे, तो स्वराज्य के लिए हमें उसकी मदद मिलेगी।

पाठक : अभी तो ये सब मुझे फिजूल की बड़ी-बड़ी बातें लगती हैं। अंग्रेजों की मदद मिले और उससे स्वराज्य मिल जाए, ये तो आपने दो उलटी बातें कहीं, लेकिन इस सवाल का हल अभी मुझे नहीं चाहिए। उसमें समय बिताना बेकार है। स्वराज्य कैसे मिलेगा, यह जब आप बताएँगे तब शायद आपके विचार मैं समझ सकूँ तो समझ सकूँ। फिलहाल तो अंग्रेजों की मदद की आपकी बात ने मुझे शंका में डाल दिया है और आपके विचारों के ख़िलाफ मुझे भरमा दिया है। इसलिए यह बात आप आगे न बढ़ाएँ तो अच्छा हो।

मुझे दिखाना तो इतना ही है कि कांग्रेस ने हिन्द को स्वराज्य का रस चखाया। इसका जस कोई और लेना चाहे तो वह ठीक न होगा और हम भी ऐसा मानें तो बेक़दर ठहरेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि जो मक़सद हम हासिल करना चाहते हैं उसमें मुसीबतें पैदा होंगी।

संपादक : मैं अंग्रेजों की बात को बढ़ाना नहीं चाहता। आप शंका में पड़ गये, इसकी कोई फिकर नहीं। मुझे जो महत्त्व की बात कहनी है, उसे पहले से ही बता देना ठीक होगा। आपकी शंका को धीरज से दूर करना मेरा फर्ज है।

पाठक : आपकी यह बात मुझे पसन्द आयी। इससे मुझे जो ठीक लगे वह बात कहने की मुझमें हिम्मत आई है। अभी मेरी एक शंका रह गई है। कांग्रेस के आरम्भ से स्वराज्य की नींव पड़ी, यह कैसे कहा जा सकता है?

संपादक : देखिए, कांग्रेस ने अलग-अलग जगहों पर हिन्दुस्तानियों को इकट्ठा करके उनमें 'हम एक-राष्ट्र हैं' ऐसा जोश पैदा किया। कांग्रेस पर सरकार की कड़ी नज़र रहती थी। महसूल का हक प्रजा को होना चाहिए, ऐसी माँग कांग्रेस ने हमेशा की है। जैसा स्वराज्य कैनेडा में है वैसा स्वराज्य कांग्रेस ने हमेशा चाहा है। वैसा स्वराज्य मिलेगा या नहीं मिलेगा, वैसा

स्वराज्य हमें चाहिए या नहीं चाहिए, उससे बढ़कर दूसरा कोई स्वराज्य है या नहीं, यह सवाल अलग है। मुझे दिखाना तो इतना ही है कि कांग्रेस ने हिन्द को स्वराज्य का रस चखाया। इसका जस कोई और लेना चाहे तो वह ठीक न होगा और हम भी ऐसा मानें तो बेक़दर ठहरेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि जो मक़सद हम हासिल करना चाहते हैं उसमें मुसीबतें पैदा होंगी। कांग्रेस को अलग समझने और स्वराज्य के ख़िलाफ मानने से हम उसका उपयोग नहीं कर सकते।



**कोई भी संकल्प मामूली नहीं होता।
गंभीरता से निभाने से उसका
परिणाम अवश्य मिलता है।**

बंग-भंग

पाठक : आप कहते हैं उस तरह विचार करने पर यह ठीक लगता है कि कांग्रेस ने स्वराज्य की नींव डाली, लेकिन यह तो आप मानेंगे कि वह सही जागृति नहीं थी। सही जागृति कब और कैसे हुई ?

संपादक : बीज हमेशा हमें दिखाई नहीं देता। वह अपना काम ज़मीन के नीचे करता है और जब ख़ुद मिट जाता है तब पेड़ ज़मीन के ऊपर देखने में आता है। कांग्रेस के बारे में ऐसा ही समझिए। जिसे आप सही जागृति मानते हैं वह तो बंग-भंग से हुई, जिसके लिए हम लॉर्ड कर्ज़न के आभारी हैं। बंग-भंग के वक्त बंगालियों ने कर्ज़न साहब से बहुत प्रार्थना की, लेकिन वे साहब अपनी सत्ता के मद में लापरवाह रहे। उन्होंने मान लिया कि हिन्दुस्तानी लोग सिर्फ बकवास ही करेंगे, उनसे कुछ भी नहीं होगा। उन्होंने अपमान भरी भाषा का प्रयोग किया और ज़बरदस्ती बंगाल के टुकड़े किए। हम यह मान सकते हैं कि उस दिन से अंग्रेजी राज्य के भी टुकड़े हुए। बंग-भंग से जो धक्का अंग्रेजी हुकूमत को लगा, वैसा और किसी काम से नहीं लगा। इसका मतलब यह नहीं कि जो दूसरे गैर इन्साफ़ हुए, वे बंग-भंग से कुछ कम थे। नमक महसूल कुछ कम गैर इन्साफ़ नहीं है। ऐसा और तो आगे हम बहुत देखेंगे, लेकिन बंगाल के टुकड़े करने का विरोध करने के लिए प्रजा तैयार थी। उस वक्त प्रजा की भावना बहुत तेज़ थी। उस समय बंगाल के बहुतेरे नेता अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार थे। अपनी सत्ता, अपनी ताक़त को वे जानते थे। इसलिए तुरन्त आग भड़क उठी। अब वह बुझने वाली नहीं है, उसे बुझाने की ज़रूरत भी नहीं है। ये टुकड़े क़ायम नहीं रहेंगे, बंगाल फिर एक हो जाएगा, लेकिन अंग्रेज़ी जहाज़ में जो दरार पड़ी है, वह तो हमेशा रहेगी ही। वह दिन-ब-दिन चौड़ी होती जाएगी। जागा हुआ हिन्द फिर सो जाए, वह नामुमकिन है। बंग-भंग को रद्द करने की माँग स्वराज्य की माँग के बराबर है। बंगाल के नेता यह बात खूब जानते हैं। अंग्रेज़ी हुकूमत भी यह बात समझती है, इसीलिए टुकड़े रद्द नहीं हुए। ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं, त्यों-

बीज हमेशा हमें दिखाई नहीं देता। वह अपना काम ज़मीन के नीचे करता है और जब ख़ुद मिट जाता है तब पेड़ ज़मीन के ऊपर देखने में आता है।

त्यों प्रजा तैयार होती जाती है। प्रजा एक दिन में नहीं बनती, उसे बनने में कई बरस लग जाते हैं।

पाठक : बंग–भंग के नतीजे आपने क्या देखे?

संपादक : आज तक हम मानते आये हैं कि बादशाह से अर्ज़ करना चाहिए और वैसा करने पर भी दाद न मिले तो दुःख सहन करना चाहिए, अलबत्ता अर्ज़ तो करते ही रहना चाहिए बंगाल के टुकड़े होने के बाद लोगों ने देखा कि हमारी अर्ज़ के पीछे कुछ ताक़त चाहिए, लोगों में कष्ट सहन करने की शक्ति चाहिए। यह नया जोश टुकड़े होने का अहम नतीजा माना जाएगा। यह जोश अखबारों के लेखों में दिखाई दिया। लेख कड़े होने लगे। जो बात लोग डरते हुए या चोरी–चुपके करते थे, वह खुल्मखुल्ला होने और लिखी जाने लगी। स्वदेशी का आन्दोलन चला। अंग्रेजों को देखकर छोटे–बड़े सब भागते थे, पर अब नहीं डरते, मार–पीट से भी नहीं डरते, जेल जाने में भी उन्हें कोई हर्ज नहीं मालूम होता और हिन्द के पुत्र रत्न आज देश निकाला भुगतते हुए विदेशों में विराजमान हैं। यह चीज उस अर्ज़ से अलग है। यों लोगों में खलबली मच रही है। बंगाल की हवा उत्तर में पंजाब तक और दक्षिण में मद्रास में कन्याकुमारी तक पहुँच गई है।

पाठक : इसके अलावा और कोई जानने लायक नतीजा आपको सूझता है?

संपादक : बंग–भंग से जैसे अंग्रेज़ी जहाज़ में दरार पड़ी है, वैसे ही हममें भी दरार फूट पड़ी है। बड़ी घटनाओं के परिणाम भी यों बड़े ही होते हैं। हमारे नेताओं में दो दल हो गये हैं: एक मॉडरेट और दूसरा एक्स्ट्रीमिस्ट। उनको हम 'धीमे' और 'उतावले' कह सकते हैं। ('नरम दल' और 'गरम दल' शब्द भी चलते हैं।) कोई मॉडरेट को डरपोक पक्ष और एक्स्ट्रीमिस्ट को हिम्मतवाला पक्ष भी कहते हैं। सब अपने–अपने ख़्यालों के मुताबिक इन दो शब्दों का अर्थ करते हैं। यह सच है कि ये जो दल हुए हैं, उनके बीच ज़हर भी पैदा हुआ है। एक दल दूसरे का भरोसा नहीं करता, दोनों एक–दूसरे को ताना मारते हैं। सूरत कांग्रेस के समय करीब–करीब मार–पीट भी हो गई। ये जो दो दल हुए हैं वह देश के लिए अच्छी निशानी नहीं हैं, ऐसा मुझे तो लगता है, लेकिन मैं यह भी मानता हूँ कि ऐसे दल लम्बे अरसे तक टिकेंगे नहीं। इस तरह कब तक ये दल रहेंगे, यह तो नेताओं पर आधार रखता है।



मैं दुनिया में सिर्फ एक ही तानाशाह को स्वीकार करता हूं और वह है मेरी अन्तरात्मा की आवाज़

अशांति और असंतोष

पाठक : तो आपने बंग–भंग को जागृति का कारण माना। उससे फैली हुई अशांति को ठीक समझा जाए या नहीं?

संपादक : इन्सान नींद में से उठता है तो अंगड़ाई लेता है, इधर–उधर घूमता है और अशान्त रहता है। उसे पूरा भान आने में कुछ वक्त लगता है। उसी तरह अगर ये बंग–भंग से जागृति आई है, फिर भी बेहोशी नहीं गई है। अभी हम अंगड़ाई लेने की हालत में हैं।

अभी अशान्ति की हालत है। जैसे नींद और जाग के बीच की हालत ज़रूरी मानी जानी चाहिए और इसलिए वह ठीक कही जाएगी, वैसे बंगाल में और उस कारण से हिन्दुस्तान में जो अशान्ति फैली है वह भी ठीक है। अशांन्ति है यह हम जानते हैं, इसलिए शान्ति का समय आने की शक्यता है।

नींद से उठने के बाद हमेशा अंगड़ाई लेने की हालत में हम नहीं रहते, लेकिन देर–सबेर अपनी शक्ति के मुताबिक पूरे जागते ही हैं। इसी तरह इस अशान्ति में से हम ज़रूर छूटेंगे। अशान्ति किसी को नहीं भाती।

जब तक आदमी अपनी चालू हालत में खुश रहता है, तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है। इसलिए हर एक सुधार के पहले असंतोष होना ही चाहिए। चालू चीज से ऊब जाने पर ही उसे फेंक देने को मन करता है। ऐसा असंतोष हममें महान हिन्दुस्तानियों की और अंग्रेज़ों की पुस्तकें पढ़कर पैदा हुआ है। उस असंतोष से अशान्ति पैदा हुई और उस अशान्ति में कई लोग मरे, कई बरबाद हुए।

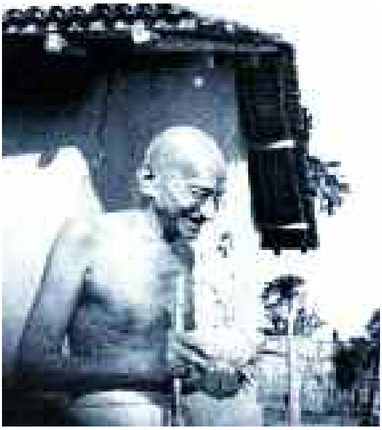
पाठक : अशान्ति का दूसरा रूप क्या है?

संपादक : अशान्ति असल में असंतोष है। उसे आजकल हम 'अनरेस्ट' कहते हैं। कांग्रेस के जमाने में वह 'डिस्कन्टेन्ट' कहलाता था। मि. ह्यूम हमेशा कहते थे कि हिन्दुस्तान में असंतोष फैलाने की ज़रूरत है। यह असंतोष बहुत उपयोगी चीज़ है।

जब तक आदमी अपनी चालू हालत में खुश रहता है, तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है। इसलिए हर एक सुधार के पहले

इन्सान नींद में से उठता है तो अंगड़ाई लेता है, इधर-उधर घूमता है और अशान्त रहता है। उसे पूरा भान आने में कुछ वक्त लगता है। उसी तरह अगर ये बंग-भंग से जागृति आई है, फिर भी बेहोशी नहीं गई है। अभी हम अंगड़ाई लेने की हालत में हैं।

असंतोष होना ही चाहिए। चालू चीज से ऊब जाने पर ही उसे फेंक देने को मन करता है। ऐसा असंतोष हममें महान हिन्दुस्तानियों की और अंग्रेज़ों की पुस्तकें पढ़कर पैदा हुआ है। उस असंतोष से अशान्ति पैदा हुई और उस अशान्ति में कई लोग मरे, कई बरबाद हुए, कई जेल गये, कई को दश निकाला हुआ। आगे भी ऐसा होगा और होना चाहिए। ये सब लक्षण अच्छे माने जा सकते हैं। इनका नतीजा बुरा भी आ सकता है।



बंदूक का भय गोली छूटने के साथ ही समाप्त हो जाता है, लेकिन प्रेम का बंधन हमेशा बढ़ता जाता है।

स्वराज्य क्या है?

पाठक : कांग्रेस ने हिन्दुस्तान को एक राष्ट्र बनाने के लिए क्या किया, बंग-भंग से जागृति कैसे हुई? अशान्ति और असंतोष कैसे फैले? यह सब जाना। अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि स्वराज्य के बारे में आपके क्या ख़्याल हैं। मुझे डर है कि शायद हमारी समझ में फ़र्क हो।

संपादक : फ़र्क होना मुमकिन है। स्वराज्य के लिए आप-हम सब अधीर बन रहे हैं, लेकिन वह क्या है इस बारे में हम ठीक राय पर नहीं पहुँचे हैं। अंग्रेज़ों को निकाल बाहर करना चाहिए, यह विचार बहुतों के मुँह से सुना जाता है, लेकिन उन्हें क्यों निकालना चाहिए, इसका कोई ठीक ख़्याल किया गया हो ऐसा नहीं लगता।

आपसे ही एक सवाल मैं पूछता हूँ। मान लीजिये कि हम माँगते हैं उतना सब अंग्रेज़ हमें दे दें तो फिर उन्हें यहाँ से निकाल देने की ज़रूरत आप समझते हैं?

पाठक : मैं तो उनसे एक ही चीज माँगूँगा। वह है : मेहरबानी करके आप हमारे मुल्क से चले जाएँ। यह माँग वे कुबूल करें और हिन्दुस्तान से चले जाएँ, तब भी अगर कोई ऐसे अर्थ का अनर्थ करे कि वे यहीं रहते हैं, तो मुझे उसकी परवाह नहीं होगी। तब फिर हम ऐसा मानेंगे कि हमारी भाषा में कुछ लोग 'जाना' का अर्थ 'रहना' करते हैं।

मेहरबानी करके आप हमारे मुल्क से चले जाएँ। यह माँग वे कुबूल करें और हिन्दुस्तान से चले जाएँ, तब भी अगर कोई ऐसे अर्थ का अनर्थ करे कि वे यहीं रहते हैं, तो मुझे उसकी परवाह नहीं होगी। तब फिर हम ऐसा मानेंगे कि हमारी भाषा में कुछ लोग 'जाना' का अर्थ 'रहना' करते हैं।

संपादक : अच्छा, हम मान लें कि हमारी माँग के मुताबिक अंग्रेज़ चले गये। उसके बाद आप क्या करेंगे?

पाठक : इस सवाल का जवाब अभी से ही दिया नहीं जा सकता। वे किस तरह जाते हैं, उस पर बाद की हालत का आधार रहेगा। मान लें कि आप कहते हैं, उस तरह वे चले गये, तो मुझे लगता है कि उनका बनाया हुआ

विधान हम चालू रखेंगे और राज का कारोबार चलाएँगे। कहने से ही वे चले जाएँ तो हमारे पास लश्कर तैयार ही होगा, इसलिए हमें राजकाज चलाने में कोई मुश्किल नहीं आयेगी।

संपादक : आप भले ही ऐसा मानें, लेकिन मैं नहीं मानूँगा। फिर भी मैं इस बात पर ज्यादा बहस नहीं करना चाहता। मुझे तो आपके सवाल का जवाब देना है। वह जवाब मैं आपसे ही कुछ सवाल करके अच्छी तरह दे सकता हूँ। इसलिए कुछ सवाल आपसे करता हूँ। हम अंग्रेजों को क्यों निकालना चाहते हैं?

पाठक : इसलिए कि उनके राज-कारोबार से देश कंगाल होता जा रहा है। वे हर साल देश से धन ले जाते हैं। वे अपनी ही चमड़ी के लोगों को बड़े ओहदे देते हैं, हमें सिर्फ गुलामी में रखते हैं, हमारे साथ बेअदबी का बरताव करते हैं और हमारी ज़रा भी परवाह नहीं करते।

संपादक : अगर वे धन बाहर न ले जाएँ, नम्र बन जाएँ और हमें बड़े ओहदे दें, तो उनके रहने में आपको कुछ हर्ज़ है?

पाठक : यह सवाल ही बेकार है। बाघ अपना रूप पलट दे तो उसकी भाईबन्दी से कोई नुकसान है? ऐसा सवाल आपने पूछा, यह सिर्फ वक्त बरबाद करने के खातिर ही। अगर बाघ अपना स्वभाव बदल सके, तो अंग्रेज़ अपनी आदत छोड़ सकते हैं। जो कभी होने वाला नहीं है वह होगा, ऐसा मानना मनुष्य की रीत ही नहीं है।

यह सवाल ही बेकार है। बाघ अपना रूप पलट दे तो उसकी भाई बन्दी से कोई नुकसान है? ऐसा सवाल आपने पूछा, यह सिर्फ वक्त बरबाद करने के खातिर ही। अगर बाघ अपना स्वभाव बदल सके, तो अंग्रेज़ अपनी आदत छोड़ सकते हैं। जो कभी होने वाला नहीं है वह होगा, ऐसा मानना मनुष्य की रीत ही नहीं है।

संपादक : कैनेडा को जो राजसत्ता मिली है, बोअर लोगों को जो राजसत्ता मिली है, वैसी ही हमें मिले तो?

पाठक : यह भी बेकार सवाल है। हमारे पास उनकी तरह गोला बारूद हो तब वैसा ज़रूर हो सकता है, लेकिन उन लोगों के जितनी सत्ता जब अंग्रेज़ हमें देंगे तब हम अपना ही झंडा रखेंगे। जैसा जापान वैसा हिन्दुस्तान। अपना

जंगी बेड़ा, अपनी फौज और अपनी जाहोजलाली होगी और तभी हिन्दुस्तान का सारी दुनिया में बोलबाला होगा।

संपादक : यह तो आपने अच्छी तस्वीर खींची। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें अंग्रेजी राज्य तो चाहिए, पर अंग्रेज (शासक) नहीं चाहिए। आप बाघ का स्वभाव तो चाहते हैं, लेकिन बाघ नहीं चाहते। मतलब यह हुआ कि आप हिन्दुस्तान को अंग्रेज बनाना चाहते हैं और हिन्दुस्तान जब अंग्रेज बन जाएगा तब वह हिन्दुस्तान नहीं कहा जाएगा, लेकिन सच्चा इंग्लिस्तान कहा जाएगा। यह मेरी कल्पना का स्वराज्य नहीं है।

आप बाघ का स्वभाव तो चाहते हैं, लेकिन बाघ नहीं चाहते। मतलब यह हुआ कि आप हिन्दुस्तान को अंग्रेज बनाना चाहते हैं और हिन्दुस्तान जब अंग्रेज बन जाएगा तब वह हिन्दुस्तान नहीं कहा जाएगा, लेकिन सच्चा इंग्लिस्तान कहा जाएगा। यह मेरी कल्पना का स्वराज्य नहीं है।

पाठक : मैंने तो जैसा मुझे सूझता है वैसा स्वराज्य बतलाया। हम जो शिक्षा पाते हैं वह अगर कुछ काम की हो, स्पेन्सर, मिल वगैरा महान लेखकों के जो लेख हम पढ़ते हैं वे कुछ काम के हों, अंग्रेज़ों की पार्लियामेन्ट पार्लियामेन्टों की माता हो, तो फिर बेशक मुझे तो लगता है कि हमें उनकी नकल करनी चाहिए, वह यहाँ तक कि जैसे वे अपने मुल्क में दूसरों को घुसने नहीं देते वैसे हम भी दूसरों को न घुसने दें।

यों तो उन्होंने अपने देश में जो किया है, वैसा और जगह अभी देखने में नहीं आता। इसलिए उसे तो हमें अपने देश में अपनाना ही चाहिए, लेकिन अब आप अपने विचार बतलाइए।

संपादक : अभी देर है। मेरे विचार अपने आप इस चर्चा में आपको मालूम हो जाएँगे। स्वराज्य को समझना आपको जितना आसान लगता है उतना ही मुझे मुश्किल लगता है। इसलिए फिलहाल मैं आपको इतना ही समझाने की कोशिश करूँगा कि जिसे आप स्वराज्य कहते हैं वह सचमुच स्वराज्य नहीं है



एक आदर्श रास्ते की खोज में हम
दिनों-दिन इंतज़ार करते रहते हैं कि शायद
वह अब मिलेगा। मगर हम भूल जाते हैं कि
रास्ते चलने के लिए बनाये जाते हैं।
इंतज़ार के लिए नहीं।

इंग्लैंड की हालत

पाठक : आप जो कहते हैं उस पर से तो मैं यही अंदाज़ा लगाता हूँ कि इंग्लैंड में जो राज्य चलता है वह ठीक नहीं है और हमारे लायक नहीं है।

संपादक : आपका यह ख़्याल सही है। इंग्लैंड में आज जो हालत है वह सचमुच तरस खाने लायक है। मैं तो भगवान से यही माँगता हूँ कि हिन्दुस्तान की ऐसी हालत कभी न हो। जिसे आप पार्लियामेन्टों की माता कहते हैं, वह पार्लियामेन्ट तो बाँझ और बेसवा है। ये दोनों शब्द बहुत कड़े हैं, तो भी उसे अच्छी तरह लागू होते हैं। मैंने उसे बाँझ कहा, क्योंकि अब तक उस पार्लियामेन्ट ने अपने आप एक भी अच्छा काम नहीं किया। अगर उस पर दबाव डालने वाला कोई न हो तो वह कुछ भी न करे, ऐसी उसकी कुदरती हालत है और वह बेसवा है, क्योंकि जो मंत्रिमंडल उसे रखे उसके पास वह रहती है। आज उसका मालिक एसक्विथ है, तो कल बालफर होगा और परसों कोई तीसरा।

पार्लियामेन्ट का काम इतना सरल होना चाहिए कि दिन-ब-दिन उसका तेज बढ़ता जाए और लोगों पर उसका असर होता जाए, लेकिन इससे उल्टे इतना तो सब क़ुबूल करते हैं कि पार्लियामेन्ट के मेम्बर दिखावटी और स्वार्थी पाये जाते हैं।

पाठक : आपके बोलने में कुछ व्यंग्य है। बाँझ शब्द को अब तक आपने लागू नहीं किया। पार्लियामेन्ट लोगों की बनी है, इसलिए बेशक लोगों के दबाव से ही वह काम करेगी। वही उसका गुण है, उसके ऊपर का अंकुश है।

संपादक : यह बड़ी गलत बात है। अगर पार्लियामेन्ट बाँझ न हो तो इस तरह होना चाहिए, लोग उसमें अच्छे से अच्छे मेम्बर चुनकर भेजते हैं। मेम्बर तनख्वाह नहीं लेते, इसलिए उन्हें लोगों की भलाई के लिए पार्लियामेन्ट में जाना चाहिए। लोग खुद सुशिक्षित-संस्कारी माने जाते हैं, इसलिए उनसे भूल नहीं होती ऐसा हमें मानना चाहिए। ऐसी पार्लियामेन्ट को अर्ज़ी की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए, न दबाव की। उस पार्लियामेन्ट का काम इतना सरल होना

चाहिए कि दिन–ब–दिन उसका तेज बढ़ता जाए और लोगों पर उसका असर होता जाए, लेकिन इससे उल्टे इतना तो सब कुबूल करते हैं कि पार्लियामेन्ट के मेम्बर दिखावटी और स्वार्थी पाये जाते हैं। सब अपना मतलब साधने की सोचते हैं। सिर्फ डर के कारण ही पार्लियामेन्ट कुछ काम करती है। जो काम आज किया वह कल उसे रद्द करना पड़ता है।

आज तक एक भी चीज को पार्लियामेन्ट ने ठिकाने लगाया हो ऐसी कोई मिसाल देखने में नहीं आती। बड़े सवालों की चर्चा जब पार्लियामेन्ट में चलती है, तब उसके मेम्बर पैर फैलाकर लेटते हैं या बैठे–बैठे झपकियाँ लेते हैं। उस पार्लियामेन्ट में मेम्बर इतने जोरों से चिल्लाते हैं कि सुनने वाले हैरान–परेशान हो जाते हैं। उसके एक महान लेखक ने उसे 'दुनिया की बातूनी' जैसा नाम दिया है। मेम्बर जिस पक्ष के हों उस पक्ष के लिए अपना मत वे बगैर सोचे–विचारे देते हैं, देने को बंधे हुए हैं। अगर कोई मेम्बर इसमें अपवाद रूप निकल आये, तो उसकी कम्बख्ती ही समझिये।

पार्लियामेन्ट को मैंने बेसवा कहा, वह भी ठीक है। उसका कोई मालिक नहीं है। उसका कोई एक मालिक नहीं हो सकता, लेकिन मेरे कहने का मतलब इतना ही नहीं है। जब कोई उसका मालिक बनता है, जैसे प्रधानमंत्री, तब भी उसकी चाल एक सरीखी नहीं रहती। जैसे बुरे हाल बेसवा के होते हैं, वैसे ही सदा पार्लियामेन्ट के होते हैं।

जितना समय और पैसा पार्लियामेन्ट खर्च करती है उतना समय और पैसा अगर अच्छे लोगों को मिले तो प्रजा का उद्धार हो जाए। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट महज़ प्रजा का खिलौना है और वह खिलौना प्रजा को भारी खर्च में डालता है। ये विचार मेरे खुद के हैं ऐसा आप न मानें। बड़े विचारशील अंग्रेज़ ऐसा विचार रखते हैं।

एक मेम्बर ने तो यहाँ तक कहा है कि पार्लियामेन्ट धर्मिष्ठ आदमी के लायक नहीं रही। दूसरे मेम्बर ने तो कहा है कि पार्लियामेन्ट एक 'बच्चा' है। बच्चों को कभी आपने हमेशा बच्चा ही रहते देखा है? आज सात सौ बरस के बाद भी अगर पार्लियामेन्ट बच्चा ही हो, तो वह बड़ी कब होगी?

पाठक : आपने मुझे सोच में डाल दिया। यह सब मुझे तुरन्त मान लेना चाहिए, ऐसा तो आप नहीं कहेंगे। आप बिल्कुल निराले विचार मेरे मन में

पैदा कर रहे हैं। मुझे उन्हें हज़्म करना होगा। अच्छा, अब 'बेसवा' शब्द की विवेचना कीजिए।

संपादक : मेरे विचारों को आप तुरन्त नहीं मान सकते, यह बात ठीक है। उसके बारे में आपको जो साहित्य पढ़ना चाहिए वह आप पढ़ेंगे तो आपको कुछ ख़्याल आयेगा। पार्लियामेन्ट को मैंने बेसवा कहा, वह भी ठीक है। उसका कोई मालिक नहीं है। उसका कोई एक मालिक नहीं हो सकता, लेकिन मेरे कहने का मतलब इतना ही नहीं है।

जब कोई उसका मालिक बनता है, जैसे प्रधानमंत्री, तब भी उसकी चाल एक सरीखी नहीं रहती। जैसे बुरे हाल बेसवा के होते हैं, वैसे ही सदा पार्लियामेन्ट के होते हैं। प्रधानमंत्री को पार्लियामेन्ट की थोड़ी ही परवाह रहती है। वह तो अपनी सत्ता के मद में मस्त रहता है। अपना दल कैसे जीते इसी की लगन उसे रहती है। पार्लियामेन्ट सही काम कैसे करे? इसका वह बहुत कम विचार करता है। अपने दल को बलवान बनाने के लिए प्रधानमंत्री पार्लियामेन्ट से कैसे-कैसे काम करवाता है, इसकी मिसालें जितनी चाहिए उतनी मिल सकती हैं। यह सब सोचने लायक है।

मुझे प्रधानमंत्रियों से द्वेष नहीं है, लेकिन तजुरबे से मैंने देखा है कि वे सच्चे देशाभिमानी नहीं कहे जा सकते। जिसे हम घूस कहते हैं, वह घूस वे खुल्लमखुल्ला नहीं लेते-देते, इसलिए भले ही वे ईमानदार कहे जाएँ, लेकिन उनके पास वसीला काम कर सकता है। वे दूसरों से काम निकालने के लिए उपाधि वगैरा की घूस बहुत देते हैं।

पाठक : तब तो आज तक जिन्हें हम देशाभिमानी और ईमानदार समझते आए हैं, उन पर भी आप टूट पड़ते हैं।

संपादक : हाँ, यह सच है। मुझे प्रधानमंत्रियों से द्वेष नहीं है, लेकिन तजुरबे से मैंने देखा है कि वे सच्चे देशाभिमानी नहीं कहे जा सकते। जिसे हम घूस कहते हैं, वह घूस वे खुल्लमखुल्ला नहीं लेते-देते, इसलिए भले ही वे ईमानदार कहे जाएँ, लेकिन उनके पास वसीला काम कर सकता है। वे दूसरों से काम निकालने के लिए उपाधि वगैरा की घूस बहुत देते हैं। मैं हिम्मत के साथ कह सकता हूँ कि उनमें शुद्ध भावना और सच्ची ईमानदारी नहीं होती।

पाठक : जब आपके ऐसे ख़्याल हैं तो जिन अंग्रेजों के नाम से पार्लियामेन्ट राज करती है उनके बारे में अब कुछ कहिये, ताकि उनके स्वराज्य का पूरा ख़्याल मुझे आ जाए।

संपादक : जो अंग्रेज 'वोटर' हैं, उनकी धर्म पुस्तक (बाइबल) तो है अखबार। वे अखबारों से अपने विचार बनाते हैं। अखबार अप्रामाणिक होते हैं, एक ही बात को दो शक्लें देते हैं। एक दल वाले उसी बात को बड़ी बनाकर दिखलाते हैं, तो दूसरे दल वाले उसी को छोटी कर डालते हैं। एक अखबार वाला किसी अंग्रेज नेता को प्रामाणिक मानेगा, तो दूसरा अखबार वाला उसको अप्रामाणिक मानेगा। जिस देश में ऐसे अखबार हैं उस देश के आदमियों की कैसी दुर्दशा होगी?

पाठक : यह तो आप ही बताइये।

संपादक : उन लोगों के विचार घड़ी-घड़ी में बदलते हैं। उन लोगों में यह कहावत है कि सात-सात बरस में रंग बदलता है। घड़ी के लोलक की तरह वे इधर-उधर घूमा करते हैं। जमकर वे बैठ ही नहीं सकते।

कोई दौर-दमाम वाला आदमी हो और उसने अगर बड़ी-बड़ी बातें कर दीं या दावतें दे दीं, तो वे नक्कारची की तरह उसी के ढोल पीटने लग जाते हैं। ऐसे लोगों की पार्लियामेन्ट भी ऐसी ही होती है, उनमें एक बात ज़रूर है। वह यह कि वे अपने देश को खोयेंगे नहीं। अगर किसी ने उस पर बुरी नजर डाली तो वे उसकी मिट्टी पलीद कर देंगे, लेकिन इससे उस प्रजा में सब गुण आ गये या उस प्रजा की नक़ल की जाए, ऐसा नहीं कह सकते। अगर हिन्दुस्तान अंग्रेज प्रजा की नक़ल करे तो हिन्दुस्तान पामाल हो जाए, ऐसा मेरा पक्का ख़्याल है।

पाठक : अंग्रेज प्रजा ऐसी हो गई है, इसके आप क्या कारण मानते हैं?

संपादक : इसमें अंग्रेजों का कोई ख़ास क़ुसूर नहीं है, पर यूरोप की आजकल की सभ्यता का क़ुसूर है। वह सभ्यता नुकसानदेह है और उससे यूरोप की प्रजा पामाल होती जा रही है।



आज तक आम लोग, लाखों की संख्या में हमारे जीवन का
पोषण करने के लिए मरते आए हैं, अब उनके जीवन का
पोषण करने के लिए हमें मरना होगा। बेशक, उनके मरने में
और हमारे मरने में बुनियादी फ़र्क़ होगा। वे बिन-जाने और
अनिच्छापूर्वक मरे हैं। उनके इस विवश बलिदान ने हमें
गिराया है। अब यदि हम ज्ञानपूर्वक और इच्छापूर्वक मरेंगे तो
हमारा बलिदान हमें और हमारे समूचे राष्ट्र को ऊपर
उठायेगा। यदि हम एक आज़ाद और स्वावलम्बी देश की
तरह जीना चाहते हैं, तो इस आवश्यक बलिदान से हमें
अपना क़दम पीछे नहीं हटाना चाहिए।

सभ्यता का दर्शन

पाठक : अब तो आपको सभ्यता की भी बात करनी होगी। आपके हिसाब से तो यह सभ्यता बिगाड़ करने वाली है।

संपादक : मेरे हिसाब से ही नहीं, बल्कि अंग्रेज लेखकों के हिसाब से भी यह सभ्यता बिगाड़ करने वाली है। उसके बारे में बहुत किताबें लिखी गई हैं। वहाँ इस सभ्यता के खिलाफ़ मंडल भी क़ायम हो रहे हैं। एक लेखक ने 'सभ्यता उसके कारण और उसकी दवा' नाम की किताब लिखी है। उसमें उसने यह साबित किया है कि यह सभ्यता एक तरह का रोग है।

हिन्द स्वराज्य की सच्ची खुमारी उसी को हो सकती है, जो आत्मबल अनुभव करके शरीर बल से नहीं दबेगा और निडर रहेगा तथा सपने में भी तोप बल का उपयोग करने की बात नहीं सोचेगा।

पाठक : यह सब हम क्यों नहीं जानते ?

संपादक : इसका कारण तो साफ है। कोई भी आदमी अपने खिलाफ़ जाने वाली बात करे ऐसा शायद ही होता है। आज की सभ्यता के मोह में फँसे हुए लोग उसके खिलाफ़ नहीं लिखेंगे, उल्टे उसको सहारा मिले ऐसी ही बातें और दलीलें ढूँढ निकालेंगे। यह वे जान-बूझकर करते हैं ऐसा भी नहीं है। वे जो लिखते हैं उसे खुद सच मानते हैं। नींद में आदमी जो सपना देखता है, उसे वह सही मानता है। जब उसकी नींद खुलती है तभी उसे अपनी गलती मालूम होती है। ऐसी ही दशा सभ्यता के मोह में फँसे हुए आदमी की होती है। हम जो बातें पढ़ते हैं वे सभ्यता की हिमायत करने वालों की लिखी बातें होती हैं। उनमें बहुत होशियार और भले आदमी हैं। उनके लेखों से हम चौंधिया जाते हैं। यों एक के बाद दूसरा आदमी उसमें फँसता जाता है।

पाठक : यह बात आपने ठीक कही। अब आपने जो कुछ पढ़ा और सोचा है, उसका ख़्याल मुझे दीजिए।

संपादक : पहले तो हम यह सोचें कि सभ्यता किस हालत का नाम है। इस सभ्यता की सही पहचान तो यह है कि लोग बाहरी दुनिया की खोजों में और

शरीर के सुख में धन्यता, सार्थकता और पुरुषार्थ मानते हैं। इसकी कुछ मिसालें लें। सौ साल पहले यूरोप के लोग जैसे घरों में रहते थे उनसे ज्यादा अच्छे घरों में आज वे रहते हैं, यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है। इसमें शरीर के सुख की बात है। इसके पहले लोग चमड़े के कपड़े पहनते थे और भालों का इस्तेमाल करते थे। अब वे लंबे पतलून पहनते हैं और शरीर को सजाने के लिए तरह–तरह के कपड़े बनवाते हैं और भाले के बदले एक के बाद एक पाँच गोलियाँ छोड़ सके ऐसी चक्कर वाली बन्दूक इस्तेमाल करते हैं। यह सभ्यता की निशानी है। किसी मुल्क के लोग, जो जूते वगैरा नहीं पहनते हों, जब यूरोप के कपड़े पहनना सीखते हैं तो जंगली हालत में से सभ्य हालत में आए हुए माने जाते हैं।

सभ्यता के हिमायती साफ कहते हैं कि उनका काम लोगों को धर्म सिखाने का नहीं है। धर्म तो ढोंग है, ऐसा कुछ लोग मानते हैं और कुछ लोग धर्म का दंभ भरते हैं, नीति की बातें भी करते हैं। फिर भी मैं आपसे बीस बरस के अनुभव के बाद कहता हूँ कि नीति के नाम से अनीति सिखलाई जाती है।

पहले यूरोप में लोग मामूली हल की मदद से अपने लिए जात–मेहनत करके ज़मीन जोतते थे। उसकी जगह आज भाप के यंत्रों से हल चलाकर एक आदमी बहुत सारी ज़मीन जोत सकता है और बहुत सा पैसा जमा कर सकता है। यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है। पहले लोग कुछ ही किताबें लिखते थे और वे अनमोल मानी जाती थीं। आज हर कोई चाहे जो लिखता, छपवाता और लोगों के मन को भरमाता है। यह सभ्यता की निशानी है। पहले लोग बैलगाड़ी से रोज बारह कोस की मंज़िल तय करते थे। आज रेलगाड़ी से चार सौ कोस की मंज़िल मारते हैं।

यह तो सभ्यता की चोटी मानी गई है। यह सभ्यता जैसे–जैसे आगे बढ़ती जाती है वैसे–वैसे यह सोचा जाता है कि लोग हवाई जहाज़ से सफ़र करेंगे और थोड़े ही घंटों में दुनिया के किसी भी भाग में जा पहुँचेंगे। लोगों को हाथ–पैर हिलाने की ज़रूरत नहीं रहेगी। एक बटन दबाया कि आदमी के सामने पहनने की पोशाक हाज़िर हो जाएगी, दूसरा बटन दबाया कि उसे अखबार मिल जाएँगे, तीसरा दबाया कि उसके लिए गाड़ी तैयार हो जाएगी, हमेशा नये भोजन मिलेंगे, हाथ–पैर का काम ही नहीं पड़ेगा, सारा काम कल (यंत्र) से ही किया जाएगा। पहले जब लोग लड़ना चाहते थे तो एक–दूसरे

का शरीर बल आज़माते थे। आज तो तोप के एक गोले से हजारों जानें ली जा सकती हैं। यह सभ्यता की निशानी है।

पहले लोग खुली हवा में अपने को ठीक लगे उतना काम स्वतन्त्रता से करते थे। अब हज़ारों आदमी अपने गुज़ारे के लिए इकट्ठा होकर बड़े कारखानों में या खानों में काम करते हैं। उनकी हालत जानवर से भी बदतर हो गई है। उन्हें सीसे वगैरा के कारखानों में जान को जोखिम में डालकर काम करना पड़ता है। इसका लाभ पैसेदार लोगों को मिलता है। पहले लोगों को मार-पीट कर गुलाम बनाया जाता था, आज लोगों को पैसे का और भोग का लालच देकर गुलाम बनाया जाता है। पहले जैसे रोग नहीं थे वैसे रोग आज लोगों में पैदा हो गये हैं और उसके साथ डॉक्टर खोज करने लगे हैं कि ये रोग कैसे मिटाए जाएँ। ऐसा करने से अस्पताल बढ़े हैं। यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है। पहले लोग पत्र लिखते थे तब खास क़ासिद उसे ले जाता था और उसके लिए काफी खर्च लगता था। आज मुझे किसी को गालियाँ देने के लिए पत्र लिखना हो, तो एक पैसे में मैं गालियाँ दे सकता हूँ, किसी को मुझे मुबारकबाद देना हो तो भी मैं उसी दाम में पत्र भेज सकता हूँ, यह सभ्यता की निशानी है। पहले लोग दो या तीन बार खाते थे और वह भी खुद हाथ से पकाई हुई रोटी और थोड़ी तरकारी। अब तो हर दो घंटे पर खाना चाहिए और वह यहाँ तक कि लोगों को खाने से फुरसत ही नहीं मिलती और कितना कहूँ? यह सब आप किसी भी पुस्तक में पढ़ सकते हैं। ये सब सभ्यता की सच्ची निशानियाँ मानी जाती हैं और अगर कोई भी इससे भिन्न बात समझाए, तो वह भोला है ऐसा निश्चय ही मानिये। सभ्यता तो मैंने जो बतायी वही मानी जाती है। उसमें नीति या धर्म की बात ही नहीं है। सभ्यता के हिमायती साफ कहते हैं कि उनका काम लोगों को धर्म सिखाने का नहीं है। धर्म तो ढोंग है, ऐसा कुछ लोग मानते हैं और कुछ लोग धर्म का दंभ भरते हैं, नीति की बातें भी करते हैं। फिर भी मैं आपसे बीस बरस के

पैगम्बर मोहम्मद साहब की सीख के मुताबिक यह शैतानी सभ्यता है। हिन्दू धर्म इसे निरा 'कलजुग' कहता है। मैं आपके सामने इस सभ्यता का हूबहू चित्र नहीं खींच सकता। यह मेरी शक्ति के बाहर है, लेकिन आप समझ सकेंगे कि इस सभ्यता के कारण अंग्रेज प्रजा में सड़न ने घर कर लिया है। यह सभ्यता दूसरों का नाश करने वाली और खुद नाशवान है।

अनुभव के बाद कहता हूँ कि नीति के नाम से अनीति सिखलाई जाती है। ऊपर की बातों में नीति हो ही नहीं सकती, यह कोई बच्चा भी समझ सकता है। शरीर का सुख कैसे मिले, यही आज की सभ्यता ढूँढ़ती है और यही देने की वह कोशिश करती है, परंतु वह सुख भी नहीं मिल पाता।

यह सभ्यता तो अधर्म है और यह यूरोप में इतने दरजे तक फैल गयी है कि वहाँ के लोग आधे पागल जैसे देखने में आते हैं। उनमें सच्ची कुव्वत नहीं है, वे नशा करके अपनी ताक़त क़ायम रखते हैं। एकान्त में वे बैठ ही नहीं सकते। जो स्त्रियां घर की रानियाँ होनी चाहिए, उन्हें गलियों में भटकना पड़ता है, या कोई मज़दूरी करनी पड़ती है। इंग्लैंड में ही चालीस लाख गरीब औरतों को पेट के लिए सख्त मज़दूरी करनी पड़ती है और आजकल इसके कारण 'सफ्रीजेट' (महिला मताधिकार) का आन्दोलन चल रहा है।

यह सभ्यता ऐसी है कि अगर हम धीरज धरकर बैठे रहेंगे, तो सभ्यता की चपेट में आए हुए लोग खुद की जलायी हुई आग में जल मरेंगे। पैगम्बर मोहम्मद साहब की सीख के मुताबिक यह शैतानी सभ्यता है। हिन्दू धर्म इसे निरा 'कलजुग' कहता है। मैं आपके सामने इस सभ्यता का हूबहू चित्र नहीं खींच सकता। यह मेरी शक्ति के बाहर है, लेकिन आप समझ सकेंगे कि इस सभ्यता के कारण अंग्रेज प्रजा में सड़न ने घर कर लिया है। यह सभ्यता दूसरों का नाश करने वाली और खुद नाशवान है। इससे दूर रहना चाहिए और इसीलिए ब्रिटिश और दूसरी पार्लियामेन्ट बेकार हो गई हैं। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट अंग्रेज़ प्रजा की गुलामी की निशानी है, यह पक्की बात है। आप पढ़ेंगे और सोचेंगे तो आपको भी ऐसा ही लगेगा। इसमें आप अंग्रेजों का दोष न निकालें। उन पर तो हमें दया आनी चाहिए। वे काबिल प्रजा हैं इसलिए किसी दिन उस जाल से निकल जाएँगे ऐसा मैं मानता हूँ। वे साहसी और मेहनती हैं। मूल में उनके विचार अनीति भरे नहीं हैं, इसलिए उनके बारे में मेरे मन में उत्तम ख़्याल ही हैं। उनका दिल बुरा नहीं है। यह सभ्यता उनके लिए कोई अमिट रोग नहीं है, लेकिन अभी वे उस रोग में फँसे हुए हैं, यह तो हमें भूलना ही नहीं चाहिए।



यह जगत का निजी अनुभव है कि आधा छटांक भर आचरण का जितना फल होता है उतना मन भर भाषणों अथवा लेखों का नहीं होता।

हिन्दुस्तान कैसे गया?

पाठक : आपने सभ्यता के बारे में बहुत कुछ कहा और मुझे विचार में डाल दिया। अब तो मैं इस संकट में आ पड़ा हूँ कि यूरोप की प्रजा से मैं क्या लूँ? और क्या न लूँ? लेकिन एक सवाल मेरे मन में तुरन्त उठता है, अगर आज की सभ्यता बिगाड़ करने वाली है, एक रोग है, तो ऐसी सभ्यता में फँसे हुए अंग्रेज हिन्दुस्तान को कैसे ले सके? इसमें वे कैसे रह सकते हैं?

संपादक : आपके इस सवाल का जवाब कुछ आसानी से दिया जा सकेगा और अब थोड़ी देर में हम स्वराज्य के बारे में भी विचार कर सकेंगे। आपके इस सवाल का जवाब अभी देना बाकी है, यह मैं भूला नहीं हूँ, लेकिन आपके आखिरी सवाल पर हम आयें। हिन्दुस्तान अंग्रेजों ने लिया सो बात नहीं है, बल्कि हमने उन्हें दिया है। हिन्दुस्तान में वे अपने बल से नहीं टिके हैं, बल्कि हमने उन्हें टिका रखा है। वह कैसे सो देखें। आपको मैं याद दिलाता हूँ कि हमारे देश में वे दरअसल व्यापार के लिए आए थे। आप अपनी कंपनी बहादुर को याद कीजिए। उसे बहादुर किसने बनाया? वे बेचारे तो राज करने का इरादा भी नहीं रखते थे। कंपनी के लोगों की मदद किसने की? उनकी चाँदी को देखकर कौन मोह में पड़ जाता था? उनका माल कौन बेचता था? इतिहास सबूत देता है कि यह सब हम ही करते थे। जल्दी पैसा पाने के मतलब से हम उनका स्वागत करते थे। हम उनकी मदद करते थे। मुझे भाँग पीने की आदत हो और भाँग बेचने वाला मुझे भाँग बेचे, तो क़ुसूर बेचने वाले का निकालना चाहिए या अपना खुद का? बेचने वाले का

हमारे देश में वे दरअसल व्यापार के लिए आये थे। आप अपनी कंपनी बहादुर को याद कीजिये। उसे बहादुर किसने बनाया? वे बेचारे तो राज करने का इरादा भी नहीं रखते थे। कंपनी के लोगों की मदद किसने की? उनकी चाँदी को देखकर कौन मोह में पड़ जाता था? उनका माल कौन बेचता था? इतिहास सबूत देता है कि यह सब हम ही करते थे। जल्दी पैसा पाने के मतलब से हम उनका स्वागत करते थे।

क़ुसूर निकालने से मेरा व्यसन थोड़े ही मिटने वाला है? एक बेचने वाले को भगा देंगे तो क्या दूसरे मुझे भाँग नहीं बेचेंगे? हिन्दुस्तान के सच्चे सेवक को अच्छी तरह खोज करके इसकी जड़ तक पहुँचना होगा। ज्यादा खाने से अगर मुझे अजीर्ण हुआ हो, तो मैं पानी का दोष निकालकर अजीर्ण दूर नहीं कर सकूँगा। सच्चा डॉक्टर तो वह है जो रोग की जड़ खोजे। आप अगर हिन्दुस्तान के रोग के डॉक्टर होना चाहते हैं तो आपको रोग की जड़ खोजनी ही पड़ेगी।

उस वक्त हिन्दू-मुसलमानों के बीच बैर था। कंपनी को उससे मौका मिला। इस तरह हमने कंपनी के लिए ऐसे संजोग पैदा किये, जिससे हिन्दुस्तान पर उसका अधिकार हो जाए। इसलिए हिन्दुस्तान गया ऐसा कहने के बजाय ज्यादा सच यह कहना होगा कि हमने हिन्दुस्तान अंग्रेजों को दिया।

पाठक : आप सच कहते हैं। अब मुझे समझाने के लिए आपको दलील करने की ज़रूरत नहीं रहेगी। मैं आपके विचार जानने के लिए अधीर बन गया हूँ। अब हम बहुत ही दिलचस्प विषय पर आ गये हैं, इसलिए मुझे आप अपने ही विचार बताएँ। जब उनके बारे में शंका पैदा होगी तब मैं आपको रोकूँगा।

संपादक : बहुत अच्छा। पर मुझे डर है कि आगे चलने पर हमारे बीच फिर से मतभेद ज़रूर होगा। फिर भी जब आप मुझे रोकेंगे तभी मैं दलील में उतरूँगा। हमने देखा कि अंग्रेज व्यापारियों को हमने बढ़ावा दिया तभी वे हिन्दुस्तान में अपने पैर फैला सके। वैसे ही जब हमारे राजा लोग आपस में झगड़े तब उन्होंने कंपनी बहादुर से मदद माँगी। कंपनी बहादुर व्यापार और लड़ाई के काम में कुशल थी। उसमें उसे नीति-अनीति की अड़चन नहीं थी। व्यापार बढ़ाना और पैसा कमाना यही उसका धंधा था। उसमें जब हमने मदद दी तब उसने हमारी मदद ली और अपनी कोठियाँ बढ़ाईं। कोठियों का बचाव करने के लिए उसने लश्कर रखा। उस लश्कर का हमने उपयोग किया, इसलिए अब उसे दोष देना बेकार है। उस वक्त हिन्दू-मुसलमानों के बीच बैर था। कंपनी को उससे मौका मिला। इस तरह हमने कंपनी के लिए ऐसे संजोग पैदा किये, जिससे हिन्दुस्तान पर उसका अधिकार हो जाए। इसलिए हिन्दुस्तान गया ऐसा कहने के बजाय ज्यादा सच यह कहना होगा कि हमने हिन्दुस्तान अंग्रेजों को दिया।

पाठक : अब अंग्रेज हिन्दुस्तान को कैसे रख सकते हैं सो कहिये।

संपादक : जैसे हमने हिन्दुस्तान उन्हें दिया वैसे ही हम हिन्दुस्तान को उनके पास रहने देते हैं। उन्होंने तलवार से हिन्दुस्तान लिया ऐसा उनमें से कुछ कहते हैं और ऐसा भी कहते हैं कि तलवार से वे उसे रख रहे हैं। ये दोनों बातें गलत हैं। हिन्दुस्तान को रखने के लिए तलवार किसी काम में नहीं आ सकती, हम खुद ही उन्हें यहाँ रहने देते हैं।

नेपोलियन ने अंग्रेजों को व्यापारी प्रजा कहा है। वह बिलकुल ठीक बात है। वे जिस देश को अपने क़ाबू में रखते हैं, उसे व्यापार के लिए रखते हैं, यह जानने लायक है। उनकी फ़ौजें और जंगी बेड़े सिर्फ़ व्यापार की रक्षा के लिए हैं। जब ट्रान्सवाल में व्यापार का लालच नहीं था तब मि. ग्लेडस्टन को तुरन्त सूझ गया कि ट्रान्सवाल अंग्रेजों को नहीं रखना चाहिए। जब ट्रान्सवाल में व्यापार का आकर्षण देखा तब उससे लड़ाई की गई और मि. चेम्बरलेन ने यह ढूंढ निकाला कि ट्रान्सवाल पर अंग्रेजों की हुकूमत है। मरहूम प्रेसिडेन्ट क्रूगर से किसी ने सवाल किया: 'चाँद में सोना है या नहीं?' उसने जवाब दिया: 'चाँद में सोना होने की संभावना नहीं है, क्योंकि सोना होता तो अंग्रेज़ अपने राज के साथ उसे जोड़ देते।' पैसा उनका खुदा है, यह ध्यान में रखने से सब बातें साफ हो जाएँगी।

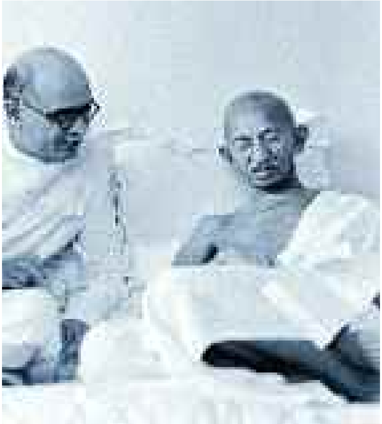
नेपोलियन ने अंग्रेजों को व्यापारी प्रजा कहा है। वह बिल्कुल ठीक बात है। वे जिस देश को अपने क़ाबू में रखते हैं, उसे व्यापार के लिए रखते हैं, यह जानने लायक है। उनकी फ़ौजें और जंगी बेड़े सिर्फ़ व्यापार की रक्षा के लिए हैं। हमने यह साबित कर दिया कि अंग्रेज़ व्यापार के लिए यहाँ आये, व्यापार के लिए यहाँ रहते हैं और उनके रहने में हम ही मददगार हैं। उनके हथियार तो बिल्कुल बेकार हैं।

तब अंग्रेजों को हम हिन्दुस्तान में सिर्फ़ अपनी ग़रज़ से रखते हैं। हमें उनका व्यापार पसंद आता है। वे चालबाजी करके हमें रिझाते हैं और रिझाकर हमसे काम लेते हैं। इसमें उनका दोष निकालना उनकी सत्ता को निभाने जैसा है। इसके अलावा हम आपस में झगड़कर उन्हें ज्यादा बढ़ावा देते हैं।

अगर आप ऊपर की बात को ठीक समझते हैं, तो हमने यह साबित कर दिया कि अंग्रेज़ व्यापार के लिए यहाँ आये, व्यापार के लिए यहाँ

रहते हैं और उनके रहने में हम ही मददगार हैं। उनके हथियार तो बिल्कुल बेकार हैं।

इस मौके पर मैं आपको याद दिलाता हूँ कि जापान में अंग्रेजी झंडा लहराता है ऐसा आप मानिये। जापान के साथ अंग्रेजों ने जो करार किया है वह अपने व्यापार के लिए किया है और आप देखेंगे कि जापान में अंग्रेज लोग अपना व्यापार खूब जमाएँगे। अंग्रेज अपने माल के लिए सारी दुनिया को अपना बाजार बनाना चाहते हैं। यह सच है कि ऐसा वे नहीं कर सकेंगे। इसमें उनका कोई क़ुसूर नहीं माना जा सकता। अपनी कोशिश में वे कोई कसर नहीं रखेंगे।



यदि लाखों साधु जनता के सेवक बन जाएं तो देश के रचनात्मक निर्माण के लिए इतनी बड़ी फौज सहज ही तैयार हो सकती है। साधु में यदि आध्यात्मिक निधि नहीं है, तो वह मानवता पर कलंक है।

हिन्दुस्तान की दशा–एक

पाठक : हिन्दुस्तान अंग्रेजों के हाथ में क्यों है? यह समझा जा सकता है। अब मैं हिन्दुस्तान की हालत के बारे में आपके विचार जानना चाहता हूँ।

संपादक : आज हिन्दुस्तान की रंक दशा है। यह आपसे कहते हुए मेरी आँखों में पानी भर आता है और गला सूख जाता है। यह बात मैं आपको पूरी तरह समझा सकूँगा या नहीं, इस बारे में मुझे शक है। मेरी पक्की राय है कि हिन्दुस्तान अंग्रेजों से नहीं, बल्कि आजकल की सभ्यता से कुचला जा रहा है, उसकी चपेट में वह फँस गया है। उसमें से बचने का अभी भी उपाय है, लेकिन दिन–ब–दिन समय बीतता जा रहा है।

मुझे तो धर्म प्यारा है, इसलिए पहला दुःख मुझे यह है कि हिन्दुस्तान धर्मभ्रष्ट होता जा रहा है। धर्म का अर्थ मैं यहाँ हिन्दू, मुस्लिम या जरथोस्ती धर्म नहीं करता, लेकिन इन सब धर्मों के अन्दर जो 'धर्म' है वह हिन्दुस्तान से जा रहा है, हम ईश्वर से विमुख होते जा रहे हैं।

हिन्दू, मुस्लिम, जरथोस्ती, ईसाई सब धर्म सिखाते हैं कि हमें दुनियावी बातों के बारे में मंद और धार्मिक बातों के बारे में उत्साही रहना चाहिए। हमें अपने दुनियावी लोभ की हद बाँधनी चाहिए और धार्मिक लोभ को खुला छोड़ देना चाहिए। हमारा उत्साह धार्मिक लोभ में ही रहना चाहिए।

पाठक : सो कैसे?

संपादक : हिन्दुस्तान पर यह तोहमत है कि हम आलसी हैं और गोरे लोग मेहनती और उत्साही हैं। इसे हमने मान लिया है, इसलिए हम अपनी हालत को बदलना चाहते हैं।

हिन्दू, मुस्लिम, जरथोस्ती, ईसाई सब धर्म सिखाते हैं कि हमें दुनियावी बातों के बारे में मंद और धार्मिक बातों के बारे में उत्साही रहना चाहिए। हमें

अपने दुनियावी लोभ की हद बाँधनी चाहिए और धार्मिक लोभ को खुला छोड़ देना चाहिए। हमारा उत्साह धार्मिक लोभ में ही रहना चाहिए।

पाठक : इससे तो मालूम होता है कि आप पाखंडी बनने की तालीम देते हैं। धर्म के बारे में ऐसी बातें करके ठग लोग दुनिया को ठगते आये हैं और आज भी ठग रहे हैं।

संपादक : आप धर्म पर गलत आरोप लगाते हैं। पाखंड तो सब धर्मों में है। जहाँ सूरज है वहाँ अंधेरा रहता ही है। परछाईं हर एक चीज़ के साथ जुड़ी रहती है। धार्मिक ठगों को आप दुनियावी ठगों से अच्छे पायेंगे। सभ्यता में जो पाखंड मैं आपको बता चुका हूँ, वैसा पाखंड धर्म में मैंने कभी नहीं देखा।

पाठक : यह कैसे कहा जा सकता है? धर्म के नाम पर हिन्दू-मुसलमान लड़े, धर्म के नाम पर ईसाइयों में बड़े-बड़े युद्ध हुए। धर्म के नाम पर हज़ारों बेगुनाह लोग मारे गए, उन्हें जला दिया गया, उन पर बड़ी-बड़ी मुसीबतें गुज़ारी गईं। यह तो सभ्यता से बदतर ही माना जाएगा।

संपादक : तो मैं कहूँगा कि यह सब सभ्यता के दुःख से ज्यादा बरदाश्त हो सकने जैसा है। आपने जो कुछ कहा वह पाखंड है, ऐसा सब लोग समझते हैं।

मुझे तो धर्म प्यारा है, इसलिए पहला दुःख मुझे यह है कि हिन्दुस्तान धर्मभ्रष्ट होता जा रहा है। धर्म का अर्थ मैं यहाँ हिन्दू, मुस्लिम या जरथोस्ती धर्म नहीं करता, लेकिन इन सब धर्मों के अन्दर जो 'धर्म' है वह हिन्दुस्तान से जा रहा है, हम ईश्वर से विमुख होते जा रहे हैं।

इसलिए पाखंड में फँसे हुए लोग मर गए कि सारा सवाल हल हो गया। जहाँ भोले लोग हैं वहाँ ऐसा ही चलता रहेगा, लेकिन उसका असर हमेशा के लिए बुरा नहीं रहता। सभ्यता की होली में जो लोग जल मरे हैं, उनकी तो कोई हद ही नहीं है। उसकी खूबी यह है कि लोग उसे अच्छा मानकर उसमें कूद पड़ते हैं।

फिर वे न तो रहते दीन के और न रहते दुनिया के। वे सच बात को बिल्कुल भूल जाते हैं। सभ्यता चूहे की तरह फूँककर काटती है। उसके असर जब हम जानेंगे तब पुराने वहम के मुकाबले में हमें मीठे लगेंगे।

मेरा कहना यह नहीं कि हमें उन वहमों को कायम रखना चाहिए। नहीं, उनके ख़िलाफ तो हम लड़ेंगे ही, लेकिन वह लड़ाई धर्म को भूलकर नहीं लड़ी जाएगी, बल्कि सही तौर पर धर्म को समझकर और उसकी रक्षा करके लड़ी जाएगी।

पाठक : तब तो आप यह भी कहेंगे कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान में शान्ति का जो सुख हमें दिया है वह बेकार है।

संपादक : आप भले शांति देखते हों, पर मैं तो शान्ति का सुख नहीं देखता।

पाठक : तब तो ठग, पिंडारी, भील वगैरा देश में जो त्रास गुजारते थे उसमें आपके ख़्याल से कोई बुराई नहीं थी?

संपादक : आप जरा सोचेंगे तो मालूम होगा कि उनका त्रास बहुत कम था। अगर सचमुच उनका त्रास भयंकर होता, तो प्रजा का जड़ मूल से कभी का नाश हो जाता और हाल की शान्ति तो नाम की ही है।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि इस शान्ति से हम नामर्द, नपुंसक और डरपोक बन गये हैं। भीलों और पिंडारियों का स्वभाव अंग्रेजों ने बदल दिया है, ऐसा हम न मान लें। हम पर ऐसा जुल्म होता हो तो हमें उसे बरदाश्त करना चाहिए, लेकिन दूसरे लोग हमें उस जुल्म से बचाएं, यह तो हमारे लिए बिल्कुल कलंक जैसा है।

आप कभी खेतों में गये हैं? मैं आपसे यकीनन कहता हूँ कि खेतों में हमारे किसान आज भी निर्भय होकर सोते हैं, जबकि अंग्रेज और आप वहाँ सोने के लिए आनाकानी करेंगे। बल तो निर्भयता में है, बदन पर माँस के लोंदे होने में बल नहीं है।

हम कमजोर और डरपोक बनें, इससे तो भीलों के तीर-कमान से मरना मुझे ज्यादा पसंद है। उस हालत में जो हिन्दुस्तान था, उसका जोश कुछ दूसरा ही था। मैकॉले ने हिन्दुस्तानियों को नामर्द माना, वह उसकी अधम अज्ञान दशा को बताता है।

हिन्दुस्तानी नामर्द कभी नहीं थे। यह जान लीजिये कि जिस देश में पहाड़ी लोग बसते हैं, जहाँ बाघ-भेड़िए रहते हैं, उस देश के रहने वाले अगर सचमुच डरपोक हों तो उनका नाश ही हो जाए। आप कभी खेतों में गए हैं?

मैं आपसे यकीनन कहता हूँ कि खेतों में हमारे किसान आज भी निर्भय होकर सोते हैं, जब कि अंग्रेज और आप वहाँ सोने के लिए आनाकानी करेंगे। बल तो निर्भयता में है, बदन पर माँस के लोंदे होने में बल नहीं है।

आप थोड़ा भी सोचेंगे तो इस बात को समझ जाएँगे और आपको, जो स्वराज्य चाहने वाले हैं, मैं सावधान करता हूँ कि भील, पिंडारी और ठग ये सब हमारे ही देशी भाई हैं। उन्हें जीतना मेरा और आपका काम है। जब तक आपके ही भाई का डर आपको रहेगा, तब तक आप कभी मक़सद हासिल नहीं कर सकेंगे।



उपकारी की संपत्ति बढ़ती ही रहती है, कहा भी है : पुण्य की जड़ पाताल तक जाती है।

हिन्दुस्तान की दशा–दो

पाठक : हिन्दुस्तान की शान्ति के बारे में मेरा जो मोह था वह आपने ले लिया। अब तो याद नहीं आता कि आपने मेरे पास कुछ भी रहने दिया हो।

संपादक : अब तक तो मैंने आपको सिर्फ धर्म की दशा का ही ख़्याल कराया है, लेकिन हिन्दुस्तान रंक क्यों है? इस बारे में मैं अपने विचार आपको बताऊंगा तब तो शायद आप मुझसे नफ़रत ही करेंगे, क्योंकि आज तक हमने और आपने जिन चीज़ों को लाभकारी माना है, वे मुझे तो नुकसानदेह ही मालूम होती हैं।

पाठक : वे क्या हैं?

संपादक : हिन्दुस्तान को रेलों ने, वकीलों ने और डॉक्टरों ने कंगाल बना दिया है। यह एक ऐसी हालत है कि अगर हम समय पर नहीं चेतेंगे, तो चारों ओर से घिर कर बरबाद हो जाएँगे।

पाठक : मुझे डर है कि हमारे विचार कभी मिलेंगे या नहीं! आपने तो जो कुछ अच्छा देखने में आया है और अच्छा माना गया है, उसी पर धावा बोल दिया है! अब बाकी क्या रहा?

अच्छा करने वाले के मन में स्वार्थ नहीं रहता। वह जल्दी नहीं करेगा। वह जानता है कि आदमी पर अच्छी बात का असर डालने में बहुत समय लगता है। बुरी बात ही तेजी से बढ़ सकती है। घर बनाना मुश्किल है, तोड़ना सरल है।

संपादक : आपको धीरज रखना होगा। सभ्यता नुकसान करने वाली कैसे है– यह तो मुश्किल से मालूम हो सकता है। डॉक्टर आपको बतलायेंगे कि क्षय का मरीज़ मौत के दिन तक भी जीने की आशा रखता है। क्षय का रोग बाहर दिखाई देने वाली हानि नहीं पहुँचाता और वह रोग आदमी को झूठी लाली देता है। इससे बीमार विश्वास में बहता रहता है और आखिर डूब जाता है। सभ्यता को भी ऐसा ही समझिये। वह एक अदृश्य रोग है। उससे चेतकर रहिये।

पाठक : अच्छा, तो अब आप रेलपुराण सुनाइये।

संपादक : आपके दिल में यह बात तुरन्त उठेगी कि अगर रेल न हो तो अंग्रेजों का क़ाबू हिन्दुस्तान पर जितना है उतना तो नहीं ही रहेगा। रेल से महामारी फैली है। अगर रेलगाड़ी न हो तो कुछ ही लोग एक जगह से दूसरी जगह जाएँगे और इस कारण संक्रामक रोग सारे देश में नहीं पहुँच पायेंगे। पहले हम कुदरती तौर पर ही 'सेग्रेगेशन' सूतक पालते थे। रेल से अकाल बढ़े हैं, क्योंकि रेलगाड़ी की सुविधा के कारण लोग अपना अनाज बेच डालते हैं। जहाँ महँगाई हो वहाँ अनाज खिंच जाता है, लोग लापरवाह बनते हैं और उससे अकाल का दुःख बढ़ता है। रेल से दुष्टता बढ़ती है। बुरे लोग अपनी बुराई तेजी से फैला सकते हैं। हिन्दुस्तान में जो पवित्र स्थान थे, वे अपवित्र बन गये हैं। पहले लोग बड़ी मुसीबत से वहाँ जाते थे। ऐसे लोग वहाँ सच्ची भावना से ईश्वर भजने जाते थे, अब तो ठगों की टोली सिर्फ़ ठगने के लिए वहाँ जाती है।

रेलगाड़ी की सुविधा के कारण लोग अपना अनाज बेच डालते हैं। जहाँ महँगाई हो वहाँ अनाज खिंच जाता है, लोग लापरवाह बनते हैं और उससे अकाल का दुःख बढ़ता है। रेल से दुष्टता बढ़ती है। बुरे लोग अपनी बुराई तेजी से फैला सकते हैं। हिन्दुस्तान में जो पवित्र स्थान थे, वे अपवित्र बन गए हैं।

पाठक : यह तो आपने इकतरफा बात कही। जैसे खराब लोग वहाँ जा सकते हैं वैसे अच्छे भी तो जा सकते हैं। वे क्या रेलगाड़ी का पूरा लाभ नहीं लेते?

संपादक : जो अच्छा होता है वह बीरबहूटी की तरह धीरे चलता है। उसकी रेल से नहीं बनती। अच्छा करने वाले के मन में स्वार्थ नहीं रहता। वह जल्दी नहीं करेगा। वह जानता है कि आदमी पर अच्छी बात का असर डालने में बहुत समय लगता है। बुरी बात ही तेजी से बढ़ सकती है। घर बनाना मुश्किल है, तोड़ना सरल है। इसलिए रेलगाड़ी हमेशा दुष्टता का ही फैलाव करेगी, यह बराबर समझ लेना चाहिए। उससे अकाल फैलेगा या नहीं, इस बारे में कोई शास्त्रकार मेरे मन में घड़ी भर शंका पैदा कर सकता है, लेकिन रेल से दुष्टता बढ़ती है यह बात जो मेरे मन में जम गयी है वह मिटने वाली नहीं है।

पाठक : लेकिन रेल का सबसे बड़ा लाभ दूसरे सब नुकसानों को भुला देता है। रेल है तो आज हिन्दुस्तान में एक राष्ट्र का जोश देखने में आता है।

इसलिए मैं तो कहूँगा कि रेल के आने से कोई नुकसान नहीं हुआ।

संपादक : यह आपकी भूल ही है। आपको अंग्रेज़ों ने सिखाया है कि आप एक राष्ट्र नहीं थे और एक राष्ट्र बनने में आपको सैकड़ों बरस लगेंगे। यह बात बिल्कुल बेबुनियाद है। जब अंग्रेज हिन्दुस्तान में नहीं थे तब हम एक राष्ट्र थे, हमारे विचार एक थे, हमारा रहन-सहन एक था, तभी तो अंग्रेज़ों ने यहाँ एक राज्य क़ायम किया। भेद तो हमारे बीच बाद में उन्होंने पैदा किये।

पाठक : यह बात मुझे ज्यादा समझनी होगी।

संपादक : मैं जो कहता हूँ वह बिना सोचे-समझे नहीं कहता। एक राष्ट्र का यह अर्थ नहीं कि हमारे बीच कोई मतभेद नहीं था, लेकिन हमारे मुख्य लोग पैदल या बैलगाड़ी में हिन्दुस्तान का सफ़र करते थे, वे एक-दूसरे की भाषा सीखते थे और उनके बीच कोई अन्तर नहीं था। जिन दूरदर्शी पुरुषों ने सेतुबंध रामेश्वर, जगन्नाथपुरी और हरिद्वार की यात्रा ठहराई, उनका आपकी राय में क्या ख़्याल होगा? वे मूर्ख नहीं थे, यह तो आप कुबूल करेंगे। वे जानते थे कि ईश्वर भजन घर बैठे भी होता है। उन्हीं ने हमें यह सिखाया है कि मन चंगा तो कठौती में गंगा, लेकिन उन्होंने सोचा कि कुदरत ने हिन्दुस्तान को एक देश बनाया है, इसलिए वह एक राष्ट्र होना चाहिए। इसलिए उन्होंने अलग-अलग स्थान तय करके लोगों को एकता का विचार इस तरह दिया, जैसा दुनिया में और कहीं नहीं दिया गया है। दो अंग्रेज जितने एक नहीं हैं उतने हम हिन्दुस्तानी एक थे और एक हैं। सिर्फ़ हम और आप, जो खुद को सभ्य मानते हैं, उन्हीं के मन में ऐसा भ्रम पैदा हुआ कि हिन्दुस्तान में हम अलग-अलग राष्ट्र हैं। रेल के कारण हम अपने को अलग राष्ट्र मानने लगे और रेल के कारण एक-राष्ट्र का ख़्याल फिर से हमारे मन में आने लगा, ऐसा आप मानें तो मुझे हर्ज नहीं है। अफ़ीमची कह सकता है कि अफ़ीम

जिन दूरदर्शी पुरुषों ने सेतुबंध रामेश्वर, जगन्नाथपुरी और हरिद्वार की यात्रा ठहराई, उनका आपकी राय में क्या ख़्याल होगा? वे मूर्ख नहीं थे, यह तो आप कुबूल करेंगे। वे जानते थे कि ईश्वर भजन घर बैठे भी होता है। उन्हीं ने हमें यह सिखाया है कि मन चंगा तो कठौती में गंगा, लेकिन उन्होंने सोचा कि कुदरत ने हिन्दुस्तान को एक-देश बनाया है, इसलिए वह एक राष्ट्र होना चाहिए।

के नुकसान का पता मुझे अफ़ीम से चला, इसलिए अफ़ीम अच्छी चीज़ है। यह सब आप अच्छी तरह सोचिये। अभी आपके मन में और भी शंकाएँ उठेंगी, लेकिन आप खुद उन सबको हल कर सकेंगे।

पाठक : आपने जो कुछ कहा उस पर मैं सोचूँगा, लेकिन एक सवाल मेरे मन में इसी समय उठता है। मुसलमान हिन्दुस्तान में आये उसके पहले के हिन्दुस्तान की बात आपने की, लेकिन अब तो मुसलमानों, पारसियों, ईसाइयों की हिन्दुस्तान में बड़ी संख्या है, वे एक राष्ट्र नहीं हो सकते। कहा जाता है कि हिन्दू-मुसलमानों में कट्टर बैर है। हमारी कहावतें भी ऐसी ही हैं। 'मियाँ और महादेव की नहीं बनेगी।' हिन्दू पूर्व में ईश्वर को पूजता है, तो मुस्लिम पश्चिम में पूजता है। मुसलमान हिन्दू को बुतपरस्त (मूर्तिपूजक) मानकर उससे नफ़रत करता है। हिन्दू मूर्तिपूजक है, मुसलमान मूर्ति को तोड़ने वाला है। हिन्दू गाय को पूजता है, मुसलमान उसे मारता है। हिन्दू अहिंसक है, मुसलमान हिंसक। यों पग-पग पर जो विरोध है, वह कैसे मिटे और हिन्दुस्तान एक कैसे हो?



जो धर्म इस लोक की बात छोड़कर परलोक की बात करता है वह धर्म नहीं हो सकता।

हिन्दुस्तान की दशा–तीन

संपादक : आपका आख़िरी सवाल बड़ा गम्भीर मालूम होता है, लेकिन सोचने पर वह सरल मालूम होगा। यह सवाल उठा है, उसका कारण भी रेल, वकील और डॉक्टर हैं। वकीलों और डॉक्टरों का विचार तो अभी करना बाकी है। रेलों का विचार हम कर चुके। इतना मैं जोड़ता हूँ कि मनुष्य इस तरह पैदा किया गया है कि अपने हाथ–पैर से बने उतनी ही आने–जाने वगैरा की हलचल उसे करनी चाहिए। अगर हम रेल वगैरा साधनों से दौड़धूप करें ही नहीं, तो बहुत पेचीदे सवाल हमारे सामने आयेंगे ही नहीं। हम खुद होकर दुःख को न्योतते हैं। भगवान ने मनुष्य की हद उसके शरीर की बनावट से ही बाँध दी, लेकिन मनुष्य ने उस बनावट की हद को लाँघने के उपाय ढूँढ निकाले। मनुष्य को अक्ल इसलिए दी गई है कि उसकी मदद से वह भगवान को पहचाने, पर मनुष्य ने अक्ल का उपयोग भगवान को भूलने में किया। मैं अपनी कुदरती हद के मुताबिक अपने आसपास रहने वालों की ही सेवा कर सकता हूँ, पर मैंने तुरन्त अपनी मगरूरी में ढूँढ निकाला कि मुझे तो सारी दुनिया की सेवा अपने तन से करनी चाहिए। ऐसा करने में अनेक धर्मों के और कई तरह के लोगों का साथ होगा। यह बोझ मनुष्य उठा ही नहीं सकता और इसलिए अकुलाता है। इस विचार से आप समझ लेंगे कि रेलगाड़ी सचमुच एक तूफानी साधन है। मनुष्य रेलगाड़ी का उपयोग करके भगवान को भूल गया है।

भगवान ने मनुष्य की हद उसके शरीर की बनावट से ही बाँध दी, लेकिन मनुष्य ने उस बनावट की हद को लाँघने के उपाय ढूँढ निकाले।

पाठक : पर मैं तो अब जो सवाल मैंने उठाया है उसका जवाब सुनने को अधीर हो रहा हूँ। मुसलमानों के आने से हमारा एक राष्ट्र रहा या मिटा?

संपादक : हिन्दुस्तान में चाहे जिस धर्म के आदमी रह सकते हैं, उससे वह एक राष्ट्र मिटने वाला नहीं है। जो नये लोग उसमें दाखिल होते हैं, वे उसकी प्रजा को तोड़ नहीं सकते, वे उसकी प्रजा में घुलमिल जाते हैं। ऐसा हो तभी कोई मुल्क एक राष्ट्र माना जाएगा। ऐसे मुल्क में दूसरे लोगों का समावेश करने का गुण होना चाहिए। हिन्दुस्तान ऐसा था और आज भी है। यों तो

जितने आदमी उतने धर्म ऐसा मान सकते हैं। एक राष्ट्र होकर रहने वाले लोग एक-दूसरे के धर्म में दखल नहीं देते, अगर देते हैं तो समझना चाहिए कि वे एक राष्ट्र होने लायक नहीं हैं। अगर हिन्दू मानें कि सारा हिन्दुस्तान सिर्फ़ हिन्दुओं से भरा होना चाहिए, तो यह एक निरा सपना है। मुसलमान अगर ऐसा मानें कि उसमें सिर्फ़ मुसलमान ही रहें, तो उसे भी सपना ही समझिए। फिर भी हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, जो इस देश को अपना वतन मानकर बस चुके हैं। एक देशी, एक मुल्की हैं, वे देशी भाई हैं और उन्हें एक-दूसरे के स्वार्थ के लिए भी एक होकर रहना पड़ेगा। दुनिया के किसी भी हिस्से में एक राष्ट्र का अर्थ एक धर्म नहीं किया गया है, हिन्दुस्तान में तो ऐसा था ही नहीं।

पाठक : लेकिन दोनों कौमों के कट्टर बैर का क्या?

संपादक : 'कट्टर बैर' शब्द दोनों के दुश्मन ने खोज निकाला है। जब हिन्दू-मुसलमान झगड़ते थे तब वे ऐसी बातें भी करते थे। झगड़ा तो हमारा सबका बंद हो गया है। फिर कट्टर बैर काहे का? और इतना याद रखिये कि अंग्रेजों के आने के बाद ही हमारा झगड़ा बन्द हुआ ऐसा नहीं है। हिन्दू लोग मुसलमान बादशाहों के मातहत और मुसलमान हिन्दू राजाओं के मातहत रहते आये हैं। दोनों को बाद में समझ में आ गया कि झगड़ने से कोई फायदा नहीं, लड़ाई से कोई अपना धर्म नहीं छोड़ेंगे और कोई अपनी ज़िद भी नहीं छोड़ेंगे। इसलिए दोनों ने मिलकर रहने का फ़ैसला किया। झगड़े तो फिर से अंग्रेज़ों ने शुरू करवाये।

उन्हें इतिहास लिखने की आदत है, हर एक जाति के रीति-रिवाज जानने का वे दंभ करते हैं। ईश्वर ने हमारा मन तो छोटा बनाया है, फिर भी वे ईश्वरी दावा करते आये हैं और तरह-तरह के प्रयोग करते हैं।

'मियाँ और महादेव की नहीं बनती' इस कहावत को भी ऐसा ही समझिए। कुछ कहावतें हमेशा के लिए रह जाती हैं और नुकसान करती ही रहती हैं। हम कहावत की धुन में इतना भी याद नहीं रखते कि बहुतेरे हिन्दुओं और मुसलमानों के बाप-दादे एक ही थे, हमारे अंदर एक ही खून है। क्या धर्म बदला इसलिए हम आपस में दुश्मन बन गये? धर्म तो एक ही जगह पहुँचने के अलग-अलग रास्ते हैं। हम दोनों अलग-अलग रास्ते लें, इसमें क्या हो गया? उसमें लड़ाई काहे की?

और ऐसी कहावतें तो शैवों और वैष्णवों में भी चलती हैं, पर इससे कोई यह नहीं कहेगा कि वे एक-राष्ट्र नहीं हैं। वेदधर्मियों और जैनों के बीच बहुत फर्क माना जाता है, फिर भी इससे वे अलग राष्ट्र नहीं बन जाते। हम गुलाम हो गये हैं, इसीलिए अपने झगड़े हम तीसरे के पास ले जाते हैं।

जैसे मुसलमान मूर्ति का खंडन करने वाले हैं, वैसे हिन्दुओं में भी मूर्ति का खंडन करने वाला एक वर्ग देखने में आता है। ज्यों-ज्यों सही ज्ञान बढ़ेगा त्यों-त्यों हम समझते जाएँगे कि हमें पसंद न आने वाला धर्म दूसरा आदमी पालता हो, तो भी उससे बैरभाव रखना हमारे लिए ठीक नहीं, हम उस पर जबरदस्ती न करें।

पाठक : अब गोरक्षा के बारे में अपने विचार बताइये।

संपादक : मैं खुद गाय को पूजता हूँ यानी मान देता हूँ। गाय हिन्दुस्तान की रक्षा करने वाली है, क्योंकि उसकी संतान पर हिन्दुस्तान का, जो खेती प्रधान देश है, आधार है। गाय कई तरह से उपयोगी है। यह तो मुसलमान भाई भी कुबूल करेंगे।

मैं अपनी कुदरती हद के मुताबिक अपने आसपास रहने वालों की ही सेवा कर सकता हूँ, पर मैंने तुरन्त अपनी मगरूरी में ढूँढ निकाला कि मुझे तो सारी दुनिया की सेवा अपने तन से करनी चाहिए।

लेकिन जैसे मैं गाय को पूजता हूँ वैसे मैं मनुष्य को भी पूजता हूँ। जैसे गाय उपयोगी है वैसे मनुष्य भी, फिर चाहे वह मुसलमान हो या हिन्दु उपयोगी है। तब क्या गाय को बचाने के लिए मैं मुसलमान से लड़ूंगा? क्या उसे मैं मारूंगा? ऐसा करने से मैं मुसलमान का और गाय का भी दुश्मन बनूंगा। इसलिए मैं कहूंगा कि गाय की रक्षा करने का एक यही उपाय है कि मुझे अपने मुसलमान भाई के सामने हाथ जोड़ने चाहिए और उसे देश की खातिर गाय को बचाने के लिए समझाना चाहिए। अगर वह न समझे तो मुझे गाय को मरने देना चाहिए, क्योंकि वह मेरे बस की बात नहीं। अगर मुझे गाय पर अत्यंत दया आती हो तो अपनी जान दे देनी चाहिए, लेकिन मुसलमान की जान नहीं लेनी चाहिए। वही धार्मिक कानून है, ऐसा मैं तो मानता हूँ। 'हाँ' और 'नहीं' के बीच हमेशा बैर रहता है। अगर मैं वाद-विवाद करूँगा, तो मुसलमान भी वाद-विवाद करेगा। अगर मैं टेढ़ा बनूँगा, तो वह भी टेढ़ा बनेगा। अगर मैं बालिश्त भर नमूँगा, तो वह हाथ भर नमेगा और अगर वह नहीं भी नमे तो मेरा नमना ग़लत नहीं कहलायेगा। जब हमने ज़िद

की तब गोकशी बढ़ी। मेरी राय है कि गोरक्षा प्रचारिणी सभा गोवध प्रचारिणी सभा मानी जानी चाहिए। ऐसी सभा का होना हमारे लिए बदनामी की बात है। जब गाय की रक्षा करना हम भूल गये तब ऐसी सभा की ज़रूरत पड़ी होगी।

मेरा भाई गाय को मारने दौड़े, तो मैं उसके साथ कैसा बरताव करूँगा? उसे मारूँगा या उसके पैरों में पड़ूँगा? अगर आप कहें कि मुझे उसके पाँव पड़ना चाहिए, तो मुझे मुसलमान भाई के भी पाँव पड़ना चाहिए।

हिन्दू-मुसलमान दोनों जोश में आते हैं तब अक्सर गलत काम कर बैठते हैं। उन्हें हमें सहन करना होगा, लेकिन ऐसी तकरार को भी बड़ी वकालत बघारकर हम अंग्रेजों की अदालत में न ले जाएँ। दो आदमी लड़ें लड़ाई में दोनों के सिर या एक का सिर फूटे तो उसमें तीसरा क्या न्याय करेगा?

गाय को दु:ख देकर हिन्दू गाय का वध करता है, इससे गाय को कौन छुड़ाता है? जो हिन्दू गाय की औलाद को पैना (आर) भोंकता है, उस हिन्दू को कौन समझाता है? इससे हमारे एक राष्ट्र होने में कोई रुकावट नहीं आई है।

अंत में, हिन्दू अहिंसक और मुसलमान हिंसक है, यह बात अगर सही हो तो अहिंसक का धर्म क्या है? अहिंसक को आदमी की हिंसा करनी चाहिए, ऐसा कहीं लिखा नहीं है। अहिंसक के लिए तो राह सीधी है। उसे एक को बचाने के लिए दूसरे की हिंसा करनी ही नहीं चाहिए। उसे तो मात्र चरण-वंदना करनी चाहिए, सिर्फ़ समझाने का काम करना चाहिए। इसी में उसका पुरुषार्थ है।

लेकिन क्या तमाम हिन्दू अहिंसक हैं? सवाल की जड़ में जाकर विचार करने पर मालूम होता है कि कोई भी अहिंसक नहीं है, क्योंकि जीव को तो हम मारते ही हैं, लेकिन इस हिंसा से हम छूटना चाहते हैं, इसलिए अहिंसक कहलाते हैं। साधारण विचार करने से मालूम होता है कि बहुत से हिन्दू माँस खाने वाले हैं, इसलिए वे अहिंसक नहीं माने जा सकते। खींचतान कर दूसरा अर्थ करना हो तो मुझे कुछ कहना नहीं है। जब ऐसी हालत है तब मुसलमान हिंसक और हिन्दू अहिंसक हैं, इसलिए दोनों की नहीं बनेगी, वह सोचना बिल्कुल गलत है।

ऐसे विचार स्वार्थी धर्म शिक्षकों, शास्त्रियों और मुल्लाओं ने हमें दिये हैं और इसमें जो कमी रह गई थी, उसे अंग्रेजों ने पूरा किया है। उन्हें इतिहास

लिखने की आदत है, हर एक जाति के रीति–रिवाज जानने का वे दंभ करते हैं। ईश्वर ने हमारा मन तो छोटा बनाया है, फिर भी वे ईश्वरी दावा करते आये हैं और तरह–तरह के प्रयोग करते हैं। वे अपने बाजे खुद बजाते हैं और हमारे मन में अपनी बात सही होने का विश्वास जमाते हैं। हम भोलेपन में उस सब पर भरोसा कर लेते हैं।

जो टेढ़ा नहीं देखना चाहते वे देख सकेंगे कि कुरान शरीफ़ में ऐसे सैकड़ों वचन हैं, जो हिन्दुओं को मान्य हों, भगवद् गीता में ऐसी बातें लिखी हैं कि जिनके ख़िलाफ मुसलमान को कोई भी ऐतराज नहीं हो सकता। कुरान शरीफ़ का कुछ भाग मैं न समझ पाऊँ या कुछ भाग मुझे पसंद न आए, इस वजह से क्या मैं उसे मानने वाले से नफ़रत करूँ? झगड़ा दो से ही हो सकता है। मुझे झगड़ा नहीं करना हो तो मुसलमान क्या करेगा? और मुसलमान को झगड़ा न करना हो तो मैं क्या कर सकता हूँ? हवा में हाथ उठाने वाले का हाथ उखड़ जाता है। सब अपने–अपने धर्म का स्वरूप समझकर उससे चिपके रहें और शास्त्रियों तथा मुल्लाओं को बीच में न आने दें तो झगड़े का मुँह हमेशा के लिए काला ही रहेगा।

गाय को दुःख देकर हिन्दू गाय का वध करता है, इससे गाय को कौन छुड़ाता है? जो हिन्दू गाय की औलाद को पैना (आर) भोंकता है, उस हिन्दू को कौन समझाता है? इससे हमारे एक राष्ट्र होने में कोई रुकावट नहीं आई है।

पाठक : अंग्रेज दोनों क़ौमों का मेल होने देंगे?

संपादक : यह सवाल डरपोक आदमी का है। यह सवाल हमारी हीनता को दिखाता है। अगर दो भाई चाहते हों कि उनका आपस में मेल बना रहे, तो कौन उनके बीच में आ सकता है? अगर तीसरा आदमी दोनों के बीच झगड़ा पैदा कर सके, तो उन भाइयों को हम कच्चे दिल के कहेंगे। उसी तरह अगर हम हिन्दू और मुसलमान कच्चे दिल के होंगे, तो फिर अंग्रेजों का कुसूर निकालना बेकार होगा। कच्चा घड़ा एक कंकड़ से नहीं तो दूसरे कंकड़ से फूटेगा ही। घड़े को बचाने का रास्ता यह नहीं है कि उसे कंकड़ से दूर रखा जाए, बल्कि यह है कि उसे पक्का बनाया जाए, जिससे कंकड़ का भय ही न रहे। उसी तरह हमें पक्के दिल के बनना है। हम दोनों में से कोई एक भी

पक्के दिल के होंगे, तो तीसरे की कुछ नहीं चलेगी। यह काम हिन्दू आसानी से कर सकते हैं। उनकी संख्या बड़ी है, वे अपने को ज्यादा पढ़े-लिखे मानते हैं, इसलिए वे पक्का दिल रख सकते हैं।

अगर दो भाई चाहते हों कि उनका आपस में मेल बना रहे, तो कौन उनके बीच में आ सकता है? अगर तीसरा आदमी दोनों के बीच झगड़ा पैदा कर सके, तो उन भाइयों को हम कच्चे दिल के कहेंगे। उसी तरह अगर हम हिन्दू और मुसलमान कच्चे दिल के होंगे, तो फिर अंग्रेजों का कुसूर निकालना बेकार होगा। कच्चा घड़ा एक कंकड़ से नहीं तो दूसरे कंकड़ से फूटेगा ही। घड़े को बचाने का रास्ता यह नहीं है कि उसे कंकड़ से दूर रखा जाए।

दोनों क़ौमों के बीच अविश्वास है, इसलिए मुसलमान लॉर्ड मॉर्ले से कुछ हक माँगते हैं। इसमें हिन्दू क्यों विरोध करें? अगर हिन्दू विरोध न करें तो अंग्रेज चौंकेंगे, मुसलमान धीरे-धीरे हिन्दुओं का भरोसा करने लगेंगे और दोनों का भाईचारा बढ़ेगा। अपने झगड़े अंग्रेजों के पास ले जाने में हमें शरमाना चाहिए। ऐसा करने से हिन्दू कुछ खोने वाले नहीं हैं, इसका हिसाब आप खुद लगा सकेंगे। जिस आदमी ने दूसरे पर विश्वास किया, उसने आज तक कुछ खोया नहीं है।

मैं यह नहीं कहना चाहता कि हिन्दू-मुसलमान कभी झगड़ेंगे ही नहीं। दो भाई साथ रहें तो उनके बीच तकरार होती है। कभी हमारे सिर भी फूटेंगे। ऐसा होना ज़रूरी नहीं है, लेकिन सब लोग एक सी अक्ल के नहीं होते। दोनों जोश में आते हैं तब अक्सर गलत काम कर बैठते हैं। उन्हें हमें सहन करना होगा, लेकिन ऐसी तकरार को भी बड़ी वकालत बघारकर हम अंग्रेजों की अदालत में न ले जाएँ। दो आदमी लड़ें, लड़ाई में दोनों के सिर या एक का सिर फूटे तो उसमें तीसरा क्या न्याय करेगा? जो लड़ेंगे वे जख्मी भी होंगे। बदन से बदन टकरायेगा तब कुछ निशानी तो रहेगी ही। उसमें न्याय क्या हो सकता है?



न्याय की अदालतों से भी एक बड़ी
अदालत होती है। वह अदालत अंतर की
आवाज़ की है और वह अन्य सब अदालतों
से ऊपर की अदालत है।

हिन्दुस्तान की दशा–चार

पाठक : आप कहते हैं कि दो आदमी झगड़ें तब उसका न्याय भी नहीं कराना चाहिए। यह तो आपने अजीब बात कही।

संपादक : इसे अजीब कहिये या दूसरा कोई विशेषण लगाइये, पर बात सही है। आपकी शंका हमें वकील–डॉक्टरों की पहचान कराती है। मेरी राय है कि वकीलों ने हिन्दुस्तान को गुलाम बनाया है, हिन्दू–मुसलमानों के झगड़े बढ़ाये हैं और अंग्रेज़ी हुकूमत को यहाँ मज़बूत किया है।

पाठक : ऐसे इल्ज़ाम लगाना आसान है, लेकिन उन्हें साबित करना मुश्किल होगा। वकीलों के सिवा दूसरा कौन हमें आज़ादी का मार्ग बताता? उनके सिवा गरीबों का बचाव कौन करता? उनके सिवा कौन हमें न्याय दिलाता? देखिये, स्व. मनमोहन घोष ने कितनों को बचाया? खुद एक कौड़ी भी उन्होंने नहीं ली।

कांग्रेस, जिसके आपने ही बखान किये हैं, वकीलों से निभती है और उनकी मेहनत से ही उसमें काम होते हैं। इस वर्ग की आप निंदा करें, यह इन्साफ़ के साथ गैर इन्साफ़ करने जैसा है। वह तो आपके हाथ में अखबार आया इसलिए चाहे जो बोलने की छूट लेने जैसा लगता है।

हिन्दू–मुसलमान आपस में लड़े हैं। तटस्थ आदमी उनसे कहेगा कि आप गयी–बीती को भूल जाएँ, इसमें दोनों का क़ुसूर रहा होगा। अब दोनों मिलकर रहिए, लेकिन वे वकील के पास जाते हैं। वकील का फ़र्ज़ हो जाता है कि वह मुवक्किल की ओर ज़ोर लगाए। अगर वह ऐसा नहीं करता तो माना जाएगा कि वह अपने पेशे को बट्टा लगाता है। इसलिए वकील तो आमतौर पर झगड़ा आगे बढ़ाने की ही

संपादक : जैसा आप मानते हैं वैसा ही मैं भी एक समय मानता था। वकीलों ने कभी कोई अच्छा काम नहीं किया, ऐसा मैं आपसे नहीं कहना चाहता। मि. मनमोहन घोष की मैं इज़्ज़त करता हूँ। उन्होंने गरीबों की मदद की थी यह बात सही है। कांग्रेस में वकीलों ने कुछ काम किया है, यह भी हम मान सकते हैं। वकील भी आखिर मनुष्य हैं और मनुष्य जाति में कुछ तो अच्छाई है ही। वकीलों की भलमनसी के जो बहुत से किस्से देखने में

आते हैं, वे तभी हुए जब वे अपने को वकील समझना भूल गये। मुझे तो आपको सिर्फ़ यही दिखाना है कि उनका धंधा उन्हें अनीति सिखाने वाला है। वे बुरे लालच में फँसते हैं, जिसमें से उबरने वाले बिरले ही होते हैं।

हिन्दू–मुसलमान आपस में लड़े हैं। तटस्थ आदमी उनसे कहेगा कि आप गयी–बीती को भूल जाएँ, इसमें दोनों का क़ुसूर रहा होगा। अब दोनों मिलकर रहिये, लेकिन वे वकील के पास जाते हैं। वकील का फ़र्ज़ हो जाता है कि वह मुवक्किल की ओर ज़ोर लगाए। मुवक्किल के ख़्याल में भी न हों ऐसी दलीलें मुवक्किल की ओर से ढूँढना वकील का काम है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो माना जाएगा कि वह अपने पेशे को बट्टा लगाता है। इसलिए वकील तो आमतौर पर झगड़ा आगे बढ़ाने की ही सलाह देगा।

ये अदालतें लोगों के भले के लिए नहीं हैं। जिन्हें अपनी सत्ता कायम रखनी है, वे अदालतों के ज़रिये लोगों को बस में रखते हैं। लोग अगर खुद अपने झगड़े निबटा लें, तो तीसरा आदमी उन पर अपनी सत्ता नहीं जमा सकता। सचमुच जब लोग खुद मार-पीट करके या रिश्तेदारों को पंच बनाकर अपना झगड़ा निबटा लेते थे तब वे बहादुर थे। अदालतें आयीं और वे कायर बन गए।

लोग दूसरों का दुःख दूर करने के लिए नहीं, बल्कि पैसा पैदा करने के लिए वकील बनते हैं। वह एक कमाई का रास्ता है। इसलिए वकील का स्वार्थ झगड़ा बढ़ाने में है। यह तो मेरी जानी हुई बात है कि जब झगड़े होते हैं तब वकील खुश होते हैं। मुख़तार लोग भी वकील की जात के हैं।

जहाँ झगड़े नहीं होते वहाँ भी वे झगड़े खड़े करते हैं। उनके दलाल जोंक की तरह गरीब लोगों से चिपकते हैं और उनका खून चूस लेते हैं। वह पेशा ऐसा है कि उसमें आदमियों को झगड़े के लिए बढ़ावा मिलता ही है। वकील लोग निठगे होते हैं।

आलसी लोग ऐश–आराम करने के लिए वकील बनते हैं। यह सही बात है। वकालत का पेशा बड़ा आबरूदार पेशा है, ऐसा खोज निकालने वाले भी वकील ही हैं। कानून वे बनाते हैं, उसकी तारीफ़ भी वे ही करते हैं। लोगों से क्या दाम लिये जाएँ, यह भी वे ही तय करते हैं और लोगों पर रौब जमाने के लिए आडंबर ऐसा करते हैं, मानो वे आसमान से उतरकर आये हुए देवदूत हों!

वे मजदूर से ज्यादा रोज़ी क्यों माँगते हैं? उनकी जरूरतें मज़दूर से ज्यादा क्यों हैं? उन्होंने मज़दूर से ज्यादा देश का क्या भला किया है? क्या भला करने वाले को ज्यादा पैसा लेने का हक है? और अगर पैसे के खातिर उन्होंने भला किया हो, तो उसे भला कैसे कहा जाए? यह तो उस पेशे का जो गुण है वह मैंने बताया।

वकीलों के कारण हिन्दू-मुसलमानों के बीच कुछ दंगे हुए हैं, यह तो जिन्हें अनुभव है वे जानते होंगे। उनसे कुछ खानदान बरबाद हो गए हैं। उनकी बदौलत भाइयों में ज़हर दाखिल हो गया है। कुछ रियासतें वकीलों के जाल में फँसकर क़र्ज़दार हो गयी हैं। बहुत से गरासिये इन वकीलों की कारस्तानी से लुट गए हैं। ऐसी बहुत सी मिसालें दी जा सकती हैं।

वे मजदूर से ज्यादा रोज़ी क्यों माँगते हैं? उनकी जरूरतें मज़दूर से ज्यादा क्यों हैं? उन्होंने मज़दूर से ज्यादा देश का क्या भला किया है? क्या भला करने वाले को ज्यादा पैसा लेने का हक है? और अगर पैसे के खातिर उन्होंने भला किया हो, तो उसे भला कैसे कहा जाए? यह तो उस पेशे का जो गुण है वह मैंने बताया।

लेकिन वकीलों से बड़े से बड़ा नुकसान तो यह हुआ है कि अंग्रेजों का जुआ हमारी गर्दन पर मजबूत जम गया है। आप सोचिये! क्या आप मानते हैं कि अंग्रेजी अदालतें यहाँ न होतीं तो वे हमारे देश में राज कर सकते थे? ये अदालतें लोगों के भले के लिए नहीं हैं। जिन्हें अपनी सत्ता कायम रखनी है, वे अदालतों के ज़रिये लोगों को बस में रखते हैं। लोग अगर खुद अपने झगड़े निबटा लें, तो तीसरा आदमी उन पर अपनी सत्ता नहीं जमा सकता।

सचमुच जब लोग खुद मार-पीट करके या रिश्तेदारों को पंच बनाकर अपना झगड़ा निबटा लेते थे तब वे बहादुर थे। अदालतें आयीं और वे कायर बन गये। लोग आपस में लड़कर झगड़े मिटायें, यह जंगली माना जाता था। अब तीसरा आदमी झगड़ा मिटाता है, यह क्या कम जंगलीपन है? क्या कोई ऐसा कह सकेगा कि तीसरा आदमी जो फैसला देता है वह सही फैसला ही होता है? कौन सच्चा है, यह दोनों पक्ष के लोग जानते हैं। हम भोलेपन में मान लेते हैं कि तीसरा आदमी हमसे पैसे लेकर हमारा इन्साफ़ करता है।

इस बात को अलग रखें। हकीकत तो यही दिखानी है कि अंग्रेजों ने

अदालतों के ज़रिये हम पर अंकुश जमाया है और अगर हम वकील न बनें तो ये अदालतें चल ही नहीं सकतीं। अगर अंग्रेज ही जज होते, अंग्रेज ही वकील होते और अंग्रेज ही सिपाही होते, तो वे सिर्फ़ अंग्रेजों पर ही राज करते। हिन्दुस्तानी जज और हिन्दुस्तानी वकील के बगैर उनका काम चल नहीं सका। वकील कैसे पैदा हुए, उन्होंने कैसी धाँधल मचाई, यह सब अगर आप समझ सकें, तो मेरे जितनी ही नफ़रत आपको भी इस पेशे के लिए होगी। अंग्रेजी सत्ता की एक मुख्य कुंजी उनकी अदालतें हैं और अदालतों की कुंजी वकील हैं। अगर वकील वकालत करना छोड़ दें और वह पेशा वेश्या के पेशे जैसा नीच माना जाए, तो अंग्रेजी राज एक दिन में टूट जाए। वकीलों ने हिन्दुस्तानी प्रजा पर यह तोहमत लगवाई है कि हमें झगड़े प्यारे हैं और हम कोर्ट-कचहरी रूपी पानी की मछलियाँ हैं। जो शब्द मैं वकीलों के लिए इस्तेमाल करता हूँ, वे ही शब्द जजों पर भी लागू होते हैं। ये दोनों मौसेरे भाई हैं और एक-दूसरे को बल देने वाले हैं।

जहाँ झगड़े नहीं होते वहाँ भी वे झगड़े खड़े करते हैं। उनके दलाल जोंक की तरह गरीब लोगों से चिपकते हैं और उनका खून चूस लेते हैं। वह पेशा ऐसा है कि उसमें आदमियों को झगड़े के लिए बढ़ावा मिलता ही है। वकील लोग निठगे होते हैं।



किसानों को शहर के कृत्रिम जीवन
और लकदक के चक्कर में नहीं पड़ना
चाहिए। उनकी सादगी और सरलता
ही उनका भूषण है। किसान का शहर
की ओर भागना उसकी असफलता
का ढिंढोरा है। ऐसा करके वह घर
का रहेगा न घाट का।

हिन्दुस्तान की दशा–पांच

पाठक : वकीलों की बात तो हम समझ सकते हैं। उन्होंने जो अच्छा काम किया है वह जान–बूझकर नहीं किया, ऐसा यकीन होता है। बाकी उनके धंधे को देखा जाये तो वह कनिष्ठ ही है, लेकिन आप तो डॉक्टरों को भी उनके साथ घसीटते हैं। यह कैसे?

संपादक : मैं जो विचार आपके सामने रखता हूँ, वे इस समय तो मेरे अपने ही हैं, लेकिन ऐसे विचार मैंने ही किये हैं सो बात नहीं। पश्चिम के सुधारक खुद मुझसे ज्यादा सख्त शब्दों में इन धंधों के बारे में लिख गये हैं। उन्होंने वकीलों और डॉक्टरों की बहुत निंदा की है।

उनमें से एक लेखक ने एक ज़हरी पेड़ का चित्र खींचा है, वकील–डॉक्टर वगैरा निकम्मे धंधे वालों को उसकी शाखाओं के रूप में बताया है और उस पेड़ के तने पर नीति–धर्म की कुल्हाड़ी उठाई है। अनीति को इन सब धंधों की जड़ बताया है। इससे आप यह समझ लेंगे कि मैं आपके सामने अपने दिमाग से निकाले हुए नये विचार नहीं रखता, लेकिन दूसरों का और अपना अनुभव आपके सामने रखता हूँ।

पश्चिम के सुधारक खुद मुझसे ज्यादा सख्त शब्दों में इन धंधों के बारे में लिख गये हैं। उन्होंने वकीलों और डॉक्टरों की बहुत निंदा की है। उनमें से एक लेखक ने एक ज़हरी पेड़ का चित्र खींचा है, वकील–डॉक्टर वगैरा निकम्मे धंधे वालों को उसकी शाखाओं के रूप में बताया है और उस पेड़ के तने पर नीति–धर्म की कुल्हाड़ी उठाई है। अनीति को इन सब धंधों की जड़ बताया है।

डॉक्टरों के बारे में जैसे आपको अभी मोह है वैसे कभी मुझे भी था। एक समय ऐसा था जब मैंने खुद डॉक्टर होने का इरादा किया था और सोचा था कि डॉक्टर बनकर क़ौम की सेवा करूँगा। मेरा यह मोह अब मिट गया है। हमारे समाज में वैद्य का धंधा कभी अच्छा माना ही नहीं गया, इसका भान अब मुझे हुआ है और उस विचार की क़ीमत मैं समझ सकता हूँ।

अंग्रेजों ने डॉक्टरी विद्या से भी हम पर काबू जमाया है। डॉक्टरों में दंभ की भी कमी नहीं है। मुगल बादशाह को भरमाने वाला एक अंग्रेज डॉक्टर

ही था। उसने बादशाह के घर में कुछ बीमारी मिटाई, इसलिए उसे सिरोपाव (सिरोपा) मिला। अमीरों के पास पहुँचने वाले भी डॉक्टर ही हैं।

डॉक्टरों ने हमें जड़ से हिला दिया है। डॉक्टरों से नीम-हकीम ज्यादा अच्छे, ऐसा कहने का मेरा मन होता है। इस पर हम कुछ विचार करें।

यूरोप के डॉक्टर तो हद करते हैं। वे सिर्फ़ शरीर के ही गलत जतन के लिए लाखों जीवों को हर साल मारते हैं, ज़िंदा जीवों पर प्रयोग करते हैं। ऐसा करना किसी भी धर्म को मंजूर नहीं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जरथोस्ती सब धर्म कहते हैं कि आदमी के शरीर के लिए इतने जीवों को मारने की ज़रूरत नहीं।

डॉक्टरों का काम सिर्फ़ शरीर को संभालने का है, या शरीर को संभालने का भी नहीं है। उनका काम शरीर में जो रोग पैदा होते हैं उन्हें दूर करने का है। रोग क्यों होते हैं? हमारी ही गफ़लत से। मैं बहुत खाऊँ और मुझे बदहज्मी, अजीर्ण हो जाए, फिर मैं डॉक्टर के पास जाऊँ और वह मुझे गोली दे, गोली खाकर मैं चंगा हो जाऊँ और दुबारा खूब खाऊँ और फिर से गोली लूँ।

अगर मैं गोली न लेता तो अजीर्ण की सज़ा भुगतता और फिर से बेहद नहीं खाता। डॉक्टर बीच में आया और उसने हद से ज्यादा खाने में मेरी मदद की। उससे मेरे शरीर को तो आराम हुआ, लेकिन मेरा मन कमज़ोर बना। इस तरह आख़िर मेरी यह हालत होगी कि मैं अपने मन पर जरा भी काबू न रख सकूँगा।

मैंने विलास किया, मैं बीमार पड़ा, डॉक्टर ने मुझे दवा दी और मैं चंगा हुआ। क्या मैं फिर से विलास नहीं करूँगा? ज़रूर करूँगा। अगर डॉक्टर बीच में न आता तो कुदरत अपना काम करती, मेरा मन मजबूत बनता और अन्त में निर्विषयी (व्यसन मुक्त) होकर मैं सुखी होता।

अस्पतालें पाप की जड़ हैं। उनकी बदौलत लोग शरीर का जतन कम करते हैं और अनीति को बढ़ाते हैं।

यूरोप के डॉक्टर तो हद करते हैं। वे सिर्फ़ शरीर के ही गलत जतन के लिए लाखों जीवों को हर साल मारते हैं, ज़िंदा जीवों पर प्रयोग करते हैं। ऐसा करना किसी भी धर्म को मंजूर नहीं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जरथोस्ती – सब धर्म कहते हैं कि आदमी के शरीर के लिए इतने जीवों को मारने की ज़रूरत नहीं।

डॉक्टर हमें धर्मभ्रष्ट करते हैं। उनकी बहुत सी दवाओं में चर्बी या दारू होती है। इन दोनों में से एक भी चीज हिन्दू-मुसलमान को चल सके ऐसी नहीं है। हम सभ्य होने का ढोंग करके, दूसरों को वहमी मानकर और बे-लगाम होकर चाहे सो करते रहें, यह दूसरी बात है, लेकिन डॉक्टर हमें धर्म से भ्रष्ट करते हैं, यह साफ और सीधी बात है।

इसका परिणाम यह आता है कि हम निःसत्त्व और नामर्द बनते हैं। ऐसी दशा में हम लोक सेवा करने लायक नहीं रहते और शरीर से क्षीण और बुद्धिहीन होते जा रहे हैं। अंग्रेजी या यूरोपियन डॉक्टरी सीखना गुलामी की गाँठ को मजबूत बनाने जैसा है।

हम डॉक्टर क्यों बनते हैं, यह भी सोचने की बात है। उसका सच्चा कारण तो आबरूदार और पैसा कमाने का धंधा करने की इच्छा है। उसमें परोपकार की बात नहीं है। उस धन्धे में परोपकार नहीं है, यह तो मैं बता चुका। उससे लोगों को नुकसान होता है।

डॉक्टर सिर्फ़ आडम्बर दिखाकर ही लोगों से बड़ी फीस वसूल करते हैं और अपनी एक पैसे की दवा के कई रुपये लेते हैं। यों विश्वास में और चंगे हो जाने की आशा में लोग डॉक्टरों से ठगे जाते हैं। जब ऐसा ही है तब भलाई का दिखावा करने वाले डॉक्टरों से खुले ठग, वैद्य, नीम-हकीम ज्यादा अच्छे।

डॉक्टर हमें धर्म भ्रष्ट करते हैं। उनकी बहुत सी दवाओं में चर्बी या दारू होती है। इन दोनों में से एक भी चीज हिन्दू-मुसलमान को चल सके ऐसी नहीं है। हम सभ्य होने का ढोंग करके, दूसरों को वहमी मानकर और बे-लगाम होकर चाहे सो करते रहें, यह दूसरी बात है, लेकिन डॉक्टर हमें धर्म से भ्रष्ट करते हैं, यह साफ और सीधी बात है।



जिसका आत्मबल पर विश्वास है, उसकी हार नहीं होती क्योंकि आत्मबल की पराकाष्ठा का अर्थ है मरने की तैयारी।

सच्ची सभ्यता कौन सी ?

पाठक : आपने रेल को रद्द कर दिया, वकीलों की निन्दा की, डॉक्टरों को दबा दिया। तमाम कलकाम (यंत्रों) को भी आप नुकसानदेह मानेंगे, ऐसा मैं देख सकता हूं। तब सभ्यता कहें तो किसे कहें ?

संपादक : इस सवाल का जवाब मुश्किल नहीं है। मैं मानता हूं कि जो सभ्यता हिन्दुस्तान ने दिखाई है, उस तक दुनिया में कोई नहीं पहुंच सकता। जो बीज हमारे पुरखों ने बोए हैं, उनकी बराबरी कर सके ऐसी कोई चीज देखने में नहीं आई। रोम मिट्टी में मिल गया, ग्रीस का सिर्फ नाम ही रह गया, मिस्र की बादशाही चली गई, जापान पश्चिम के शिकंजे में फंस गया और चीन का कुछ भी कहा नहीं जा सकता। लेकिन गिरा-टूटा जैसा भी हो, हिन्दुस्तान आज भी अपनी बुनियाद में मज़बूत है।

जो बीज हमारे पुरखों ने बोये हैं, उनकी बराबरी कर सके ऐसी कोई चीज देखने में नहीं आई। रोम मिट्‌टी में मिल गया, ग्रीस का सिर्फ नाम ही रह गया, मिस्र की बादशाही चली गई, जापान पश्चिम के शिकंजे में फंस गया और चीन का कुछ भी कहा नहीं जा सकता। लेकिन गिरा-टूटा जैसा भी हो, हिन्दुस्तान आज भी अपनी बुनियाद में मज़बूत है।

जो रोम और ग्रीस गिर चुके हैं, उनकी किताबों से यूरोप के लोग सीखते हैं। उनकी गलतियां वे नहीं करेंगे ऐसा गुमान रखते हैं। ऐसी उनकी कंगाल हालत है, जबकि हिन्दुस्तान अचल है, अडिग है। यही उसका भूषण है। हिन्दुस्तान पर आरोप लगाया जाता है कि वह ऐसा जंगली, ऐसा अज्ञानी है कि उससे जीवन में कुछ फेरबदल कराये ही नहीं जा सकते। यह आरोप हमारा गुण है दोष नहीं। अनुभव से जो हमें ठीक लगा है उसे हम क्यों बदलेंगे ? बहुत से अक्ल देने वाले आते-जाते रहते हैं, पर हिन्दुस्तान अडिग रहता है। यह उसकी खूबी है, यह उनका लंगर है।

सभ्यता वह आचरण है जिससे आदमी अपना फर्ज अदा करता है। फर्ज अदा करने के मानी है नीति का पालन करना। नीति के पालन का मतलब है अपने मन और इन्द्रियों को बस में रखना। ऐसा करते हुए हम अपनी

असलियत को पहचानते हैं। यही सभ्यता है। इससे जो उल्टा है वह बिगाड़ करने वाला है।

बहुत से अंग्रेज लेखक लिख गये हैं कि ऊपर की व्याख्या के मुताबिक हिन्दुस्तान को कुछ भी सीखना बाकी नहीं रहता। यह बात ठीक है। हमने देखा कि मनुष्य वृत्तियां चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़ धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे-जैसे ज्यादा दिया जाए वैसे-वैसे ज्यादा मांगता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है।

हिन्दुस्तान पर आरोप लगाया जाता है कि वह ऐसा जंगली, ऐसा अज्ञान है कि उससे जीवन में कुछ फेरबदल कराए ही नही जा सकते। यह आरोप हमारा गुण है दोष नहीं। अनुभव से जो हमें ठीक लगा है उसे हम क्यों बदलेंगे? बहुत से अक्ल देने वाले आते-जाते रहते हैं, पर हिन्दुस्तान अडिग रहता है। यह उसकी खूबी है।

इसलिए हमारे पुरखों ने भोग की हद बांध दी। बहुत सोचकर उन्होंने देखा कि सुख-दुःख तो मन के कारण हैं। अमीर अपनी अमीरी की वजह से सुखी नहीं है। गरीब अपनी गरीबी के कारण दुखी नहीं है। अमीर दुखी देखने में आता है और गरीब सुखी देखने में आता है। करोड़ों लोग तो गरीब ही रहेंगे। ऐसा देखकर उन्होंने भोग की वासना छुड़वाई।

हजारों साल पहले जो हल काम में लिया जाता था, उससे हमने काम चलाया। हज़ारों साल पहले जैसे झोंपड़े थे, उन्हें हमने कायम रखा। हज़ारों साल पहले जैसी हमारी शिक्षा थी वही चलती आई। हमने नाशकारक होड़ को समाज में जगह नहीं दी। सब अपना-अपना धंधा करते रहे। उसमें उन्होंने दस्तूर के मुताबिक दाम लिए। ऐसा नहीं था कि हमें यंत्र वगैरा की खोज करना ही नहीं आता था।

लेकिन हमारे पूर्वजों ने देखा कि लोग अगर यंत्र वगैरा की झंझट में पड़ेंगे तो गुलाम ही बनेंगे और अपनी नीति को छोड़ देंगे। उन्होंने सोच समझकर कहा कि हमें अपने हाथ-पैरों से जो काम हो सके वही करना चाहिए। हाथ-पैरों का इस्तेमाल करने में ही सच्चा सुख है, उसी में तन्दुरुस्ती है।

उन्होंने सोचा कि बड़े शहर खड़े करना बेकार की झंझट है। उनमें लोग सुखी नहीं होंगे। उनमें धूर्तों की टोलियां और वेश्याओं की गलियां पैदा होंगी, गरीब अमीरों से लूटे जायेंगे। इसलिए उन्होंने छोटे देहातों से संतोष

माना। उन्होंने देखा कि राजाओं और उनकी तलवार के बनिस्बत नीति का बल ज्यादा बलवान है। इसलिए उन्होंने राजाओं को नीतिवान पुरुषों, ऋषियों और फ़कीरों से कम दर्जे का माना। ऐसा जिस राष्ट्र का गठन है वह राष्ट्र दूसरों को सिखाने लायक है, वह दूसरों से सीखने लायक नहीं है।

इस राष्ट्र में अदालतें थीं, वकील थे, डॉक्टर-वैद्य थे। लेकिन वे सब ठीक ढंग से नियम के मुताबिक चलते थे। सब जानते थे कि ये धन्धे बड़े नहीं हैं और वकील, डॉक्टर वगैरा लोगों में लूट नहीं चलाते थे, वे तो लोगों पर आश्रित थे। वे लोगों के मालिक बनकर नहीं रहते थे। इन्साफ काफी अच्छा होता था। अदालतों में न जाना, यह लोगों का ध्येय था। उन्हें भरमाने वाले स्वार्थी लोग नहीं थे। इतनी सड़न भी सिर्फ़ राजा और राजधानी के आस-पास ही थी। यों आम प्रजा तो उससे स्वतंत्र रहकर अपने खेत का मालिकी हक भोगती थी। उसके पास सच्चा स्वराज्य था।

उन्होंने सोचा कि बड़े शहर खड़े करना बेकार की झंझट है। उनमें लोग सुखी नहीं होंगे। उनमें धूर्तों की टोलियां और वेश्याओं की गलियां पैदा होंगी, गरीब अमीरों से लूटे जायेंगे। इसलिए उन्होंने राजाओं को नीतिवान पुरुषों, ऋषियों और फ़कीरों से कम दर्जे का माना। ऐसा जिस राष्ट्र का गठन हो वह राष्ट्र दूसरों को सिखाने लायक है, वह दूसरों से सीखने लायक नहीं है।

और जहां यह चांडाल सभ्यता नहीं पहुंची है, वहां हिन्दुस्तान आज भी वैसा ही है। उसके सामने आप अपने नये ढोंगों की बात करेंगे, तो वह आपकी हंसी उड़ायेगा। उस पर न तो अंग्रेज राज करते हैं, न आप कर सकेंगे।

जिन लोगों के नाम पर हम बात करते हैं, उन्हें हम पहचानते नहीं हैं, न वे हमें पहचानते हैं। आपको और दूसरों को, जिनमें देशप्रेम है, मेरी सलाह है कि आप देश में, जहां रेल की बाढ़ नहीं फैली है उस भाग में छह माह के लिए घूम आयें और बाद में देश की लगन लगायें, बाद में स्वराज्य की बात करें।

अब आपने देखा कि सच्ची सभ्यता मैं किस चीज को कहता हूं। ऊपर मैंने जो तस्वीर खींची है वैसा हिन्दुस्तान जहां हो वहां जो आदमी फेरफार करेगा उसे आप दुश्मन समझिए। वह मनुष्य पापी है।

पाठक : आपने जैसा बताया वैसा ही हिन्दुस्तान होता तब तो ठीक था। लेकिन जिस देश में हजारों बाल-विधवायें हैं, जिस देश में दो बरस की

बच्ची की शादी हो जाती है, जिस देश में बारह साल की उम्र के लड़के-लड़कियां घर संसार चलाते हैं, जिस देश में स्त्री एक से ज्यादा पति करती है, जिस देश में नियोग की प्रथा है, जिस देश में धर्म के नाम पर कुमारिकाएं बेसवाएं बनती हैं, जिस देश में धर्म के नाम पर पाड़ों और बकरों की हत्या होती है, वह देश भी हिन्दुस्तान ही है। ऐसा होने पर भी आपने जो बताया वह क्या सभ्यता का लक्षण है ?

संपादक : आप भूलते हैं। आपने जो दोष बताये वे तो सचमुच दोष ही हैं। उन्हें कोई सभ्यता नहीं कहता। वे दोष सभ्यता के बावजूद कायम रहे है। उन्हें दूर करने के प्रयत्न हमेशा हुए है, और होते ही रहेंगे। हमसे जो नया जोश पैदा हुआ है, उसका उपयोग हम इन दोषों को दूर करने में कर सकते हैं। मैंने आपको आज की सभ्यता की जो निशानी बताई, उसे इस सभ्यता के हिमायती खुद बताते हैं। मैंने हिन्दुस्तान की सभ्यता का जो वर्णन किया, वह वर्णन नई सभ्यता के हिमायतियों ने किया है।

किसी भी देश में किसी भी सभ्यता के मातहत सभी लोग संपूर्णता तक नहीं पहुंच पाये हैं। हिन्दुस्तान की सभ्यता का झुकाव नीति को मजबूत करने की ओर है, पश्चिम की सभ्यता का झुकाव अनीति को मजबूत करने की ओर है, इसलिए मैंने उसे हानिकारक कहा है। पश्चिम की सभ्यता निरीश्वरवादी है, हिन्दुस्तान की सभ्यता ईश्वर को मानने वाली है।

किसी भी सभ्यता के मातहत सभी लोग संपूर्णता तक नहीं पहुंच पाए हैं। हिन्दुस्तान की सभ्यता का झुकाव नीति को मजबूत करने की ओर है, पश्चिम की सभ्यता का झुकाव अनीति को मजबूत करने की ओर है, इसलिए मैंने उसे हानिकारक कहा है। पश्चिम की सभ्यता निरीश्वरवादी है, हिन्दुस्तान की सभ्यता ईश्वर को मानने वाली है।

यों समझकर, ऐसी श्रद्धा रखकर, हिन्दुस्तान के हितचिंतकों को चाहिए कि वे हिन्दुस्तान की सभ्यता से, बच्चा जैसे मां से चिपटा रहता है, वैसे चिपटे रहें।



**बनिस्बत इसके कि गांव की खेती
अलग-अलग सौ टुकड़ों में बंट जाए,
क्या बेहतर नहीं है कि सौ परिवार
गांव की खेती सहयोग से करें।**

हिन्दुस्तान कैसे आज़ाद हो ?

पाठक : सभ्यता के बारे में आपके विचार मैं समझ गया। आपने जो कहा उस पर मुझे ध्यान देना होगा, तुरन्त सब कुछ मंजूर कर लिया जाए, ऐसा आप नहीं मानते होंगे, ऐसी आशा भी नहीं रखते होंगे। आपके ऐसे विचारों के अनुसार आप हिन्दुस्तान के आज़ाद होने का क्या उपाय बताएँगे ?

संपादक : मेरे विचार सब लोग तुरन्त मान लें, ऐसी आशा मैं नहीं रखता। मेरा फ़र्ज़ इतना ही है कि आपके जैसे जो लोग मेरे विचार जानना चाहते हैं, उनके सामने अपने विचार रख दूँ। वे विचार उन्हें पसंद आएँगे या नहीं आएँगे, यह तो समय बीतने पर ही मालूम होगा।

हिन्दुस्तान की आज़ादी के उपायों का हम विचार कर चुके। फिर भी हमने दूसरे रूप में उन पर विचार किया। अब हम उन पर उनके स्वरूप में विचार करें। जिस कारण से रोगी बीमार हुआ हो वह कारण अगर दूर कर दिया जाए तो रोगी अच्छा हो जाएगा यह जग मशहूर बात है। इसी तरह जिस कारण से हिन्दुस्तान गुलाम बना वे कारण अगर दूर कर दिये जाएं तो वह बंधन से मुक्त हो जाएगा।

स्वराज्य को आप सपने जैसा न मानें। मन से मानकर बैठे रहने का भी यह स्वराज्य नहीं है, यह तो ऐसा स्वराज्य है कि आपने अगर इसका स्वाद चख लिया हो, तो दूसरों को इसका स्वाद चखाने के लिए आप ज़िन्दगी भर कोशिश करेंगे, लेकिन मुख्य बात तो हर शख्स के स्वराज्य भोगने की है। डूबता आदमी दूसरे को नहीं तारेगा, लेकिन तैरता आदमी दूसरे को तारेगा। हम खुद गुलाम होंगे और दूसरों को आज़ाद करने की बात करेंगे, तो वह संभव नहीं है।

पाठक : आपकी मान्यता के मुताबिक हिन्दुस्तान की सभ्यता अगर सबसे अच्छी है, तो फिर वह गुलाम क्यों बना ?

संपादक : सभ्यता तो मैंने कही वैसी ही है, लेकिन देखने में आया है कि हर सभ्यता पर आफतें आती हैं। जो सभ्यता अचल है, वह आखिरकार

आफतों को दूर कर देती है। हिन्दुस्तान के बालकों में कोई न कोई कमी थी, इसीलिए वह सभ्यता आफतों से घिर गई, लेकिन इस घेरे में से छूटने की ताकत उसमें है, यह उसके गौरव को दिखाता है।

और फिर सारा हिन्दुस्तान गुलामी में घिरा हुआ नहीं है। जिन्होंने पश्चिम की शिक्षा पाई है और जो उसके पाश में फँस गये हैं, वे ही गुलामी में घिरे हुए हैं। हम जगत को अपनी दमड़ी के नाप से नापते हैं। अगर हम गुलाम हैं तो जगत को भी गुलाम मान लेते हैं। हम कंगाल दशा में हैं, इसलिए मान लेते हैं कि सारा हिन्दुस्तान ऐसी दशा में है। दरअसल ऐसा कुछ नहीं है। फिर भी हमारी गुलामी सारे देश की गुलामी है। ऐसा मानना ठीक है, लेकिन ऊपर की बात हम ध्यान में रखें तो समझ सकेंगे कि हमारी अपनी गुलामी मिट जाए, तो हिन्दुस्तान की गुलामी मिट गई ऐसा मान लेना चाहिए। इसमें अब आपको स्वराज्य की व्याख्या भी मिल जाती है। हम अपने ऊपर राज करें वही स्वराज्य है और वह स्वराज्य हमारी हथेली में है।

जो सभ्यता अचल है, वह आखिरकार आफतों को दूर कर देती है। हिन्दुस्तान के बालकों में कोई न कोई कमी थी, इसीलिए वह सभ्यता आफतों से घिर गई, लेकिन इस घेरे में से छूटने की ताकत उसमें है, यह उसके गौरव को दिखाता है और फिर सारा हिन्दुस्तान गुलामी में घिरा हुआ नहीं है। जिन्होंने पश्चिम की शिक्षा पाई है और जो उसके पाश में फँस गये हैं, वे ही गुलामी में घिरे हुए हैं।

इस स्वराज्य को आप सपने जैसा न मानें। मन से मानकर बैठे रहने का भी यह स्वराज्य नहीं है, यह तो ऐसा स्वराज्य है कि आपने अगर इसका स्वाद चख लिया हो, तो दूसरों को इसका स्वाद चखाने के लिए आप ज़िन्दगी भर कोशिश करेंगे, लेकिन मुख्य बात तो हर शख्स के स्वराज्य भोगने की है। डूबता आदमी दूसरे को नहीं तारेगा, लेकिन तैरता आदमी दूसरे को तारेगा। हम खुद गुलाम होंगे और दूसरों को आज़ाद करने की बात करेंगे, तो वह संभव नहीं है।

लेकिन इतना काफी नहीं है। हमें और भी आगे सोचना होगा। अब इतना तो आपकी समझ में आया होगा कि अंग्रेजों को देश से निकालने का मक़सद सामने रखने की ज़रूरत नहीं है। अगर अंग्रेज हिन्दुस्तानी बनकर

रहें तो हम उनका समावेश यहाँ कर सकते हैं। अंग्रेज अगर अपनी सभ्यता के साथ रहना चाहें, तो उनके लिए हिन्दुस्तान में जगह नहीं है। ऐसी हालत पैदा करना हमारे हाथ में है।

पाठक : अंग्रेज हिन्दुस्तानी बनें, यह नामुमकिन है।

संपादक : हमारा ऐसा कहना यह कहने के बराबर है कि अंग्रेज मनुष्य नहीं हैं। वे हमारे जैसे बनें या न बनें, इसकी हमें परवाह नहीं है। हम अपना घर साफ करें। फिर रहने लायक लोग ही उसमें रहेंगे, दूसरे अपने-आप चले जाएँगे। ऐसा अनुभव तो हर आदमी को हुआ होगा।

पाठक : ऐसा होने की बात इतिहास में तो हमने नहीं पढ़ी।

संपादक : जो चीज़ इतिहास में नहीं देखी वह कभी नहीं होगी, ऐसा मानना मनुष्य की प्रतिष्ठा में अविश्वास करना है। जो बात अक्ल में आ सके, उसे आखिर हमें आजमाना तो चाहिए ही।

हर देश की हालत एक सी नहीं होती। हिन्दुस्तान की हालत विचित्र है। हिन्दुस्तान का बल असाधारण है। इसलिए दूसरे इतिहासों से हमारा कम संबंध है। मैंने आपको बताया कि दूसरी सभ्यताएँ मिट्टी में मिल गयीं, जबकि हिन्दुस्तानी सभ्यता को आँच नहीं आई है।

हम जगत को अपनी दमड़ी के नाप से नापते हैं। अगर हम गुलाम हैं तो जगत को भी गुलाम मान लेते हैं। हम कंगाल दशा में हैं, इसलिए मान लेते हैं कि सारा हिन्दुस्तान ऐसी दशा में है। दरअसल ऐसा कुछ नहीं है। फिर भी हमारी गुलामी सारे देश की गुलामी है। हम अपने ऊपर राज करें वही स्वराज्य है और वह स्वराज्य हमारी हथेली में है।

पाठक : मुझे ये सब बातें ठीक नहीं लगतीं। हमें लड़कर अंग्रेजों को निकालना ही होगा, इसमें कोई शक नहीं। जब तक वे हमारे मुल्क में हैं, तब तक हमें चैन नहीं पड़ सकता। 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं' ऐसा देखने में आता है। अंग्रेज यहाँ हैं इसलिए हम कमज़ोर होते जा रहे हैं। हमारा तेज चला गया है और हमारे लोग घबराए, से दिखते हैं। अंग्रेज हमारे देश के लिए यम जैसे हैं। उस यम को हमें किसी भी प्रयत्न से भगाना होगा।

संपादक : आप अपने आवेश में मेरा सारा कहना भूल गये हैं। अंग्रेजों को यहाँ लाने वाले हम हैं और वे हमारी बदौलत ही यहाँ रहते हैं। आप यह कैसे भूल जाते हैं कि हमने उनकी सभ्यता अपनाई है, इसलिए वे यहाँ रह सकते हैं? आप उनसे जो नफ़रत करते हैं वह नफ़रत आपको उनकी सभ्यता से करनी चाहिए। फिर भी मान लें कि हम लड़कर उन्हें निकालना चाहते हैं। यह कैसे हो सकेगा?

पाठक : इटली ने किया वैसे। मैज़िनी और गैरीबाल्डी ने जो किया, वह तो हम भी कर सकते हैं। वे महावीर थे, इस बात से क्या आप इनकार कर सकेंगे?



ईश्वर को नहीं मानने से सबसे बड़ी हानि वही है, जो हानि अपने को न मानने से हो सकती है। अर्थात ईश्वर को न मानना आत्महत्या के समान है।

इटली और हिन्दुस्तान

संपादक : आपने इटली का उदाहरण ठीक दिया। मैज़िनी महात्मा था। गैरीबाल्डी बड़ा योद्धा था। दोनों पूजनीय थे। उनसे हम बहुत सीख सकते हैं। फिर भी इटली की दशा और हिन्दुस्तान की दशा में फर्क है।

पहले तो मैज़िनी और गैरीबाल्डी के बीच का भेद जानने लायक है। मैज़िनी के अरमान अलग थे। मैज़िनी जैसा सोचता था वैसा इटली में नहीं हुआ। मैज़िनी ने मनुष्य जाति के कर्त्तव्य के बारे में लिखते हुए यह बताया है कि हर एक को स्वराज्य भोगना सीख लेना चाहिए। यह बात उसके लिए सपने जैसी रही। गैरीबाल्डी और मैज़िनी के बीच मतभेद हो गया था यह हमें याद रखना चाहिए।

स्वदेशाभिमान का अर्थ मैं देश का हित समझता हूँ। अगर देश का हित अंग्रेजों के हाथों होता हो, तो मैं आज अंग्रेजों को झुककर नमस्कार करूँगा। अगर कोई अंग्रेज कहे कि देश को आज़ाद करना चाहिए, जुल्म के ख़िलाफ़ होना चाहिए और लोगों की सेवा करनी चाहिए, तो उस अंग्रेज को मैं हिन्दुस्तानी मानकर उसका स्वागत करूँगा।

इसके सिवा, गैरीबाल्डी ने हर इटालियन के हाथ में हथियार दिए और हर इटालियन ने हथियार लिये। इटली और आस्ट्रिया के बीच सभ्यता का भेद नहीं था। वे तो 'चचेरे भाई' माने जाएँगे। 'जैसे को तैसा' वाली बात इटली की थी। इटली को परदेशी (आस्ट्रिया के) जुए से छुड़ाने का मोह गैरीबाल्डी को था। इसके लिए उसने कावूर की मारफ़त जो साज़िशें कीं, वे उसकी शूरता को बट्टा लगाने वाली हैं।

अन्त में नतीजा क्या निकला? इटली में इटालियन राज करते हैं इसलिए इटली की प्रजा सुखी है, ऐसा आप मानते हों तो मैं आप से कहूँगा कि आप अंधेरे में भटकते हैं। मैज़िनी ने साफ़-साफ़ बताया है कि इटली आज़ाद नहीं हुआ है। विक्टर इमेन्युअल ने इटली का एक अर्थ किया, मैज़िनी ने दूसरा।

इमेन्युअल, कावूर और गैरीबाल्डी के विचार से इटली का अर्थ था इमेन्युअल या इटली का राजा और उसके हुजूरी। मैज़िनी के विचार से इटली

का अर्थ था इटली के लोग उसके किसान। इमेन्युअल वगैरा तो प्रजा के नौकर थे। मैज़िनी का इटली अब भी गुलाम है। दो राजाओं के बीच शतरंज की बाज़ी लगी थी, इटली की प्रजा तो सिर्फ़ प्यादा थी और है। इटली के मजदूर अब भी दु:खी हैं। इटली के मजदूरों की दाद-फ़रियाद नहीं सुनी जाती, इसलिए वे लोग खून करते हैं, विरोध करते हैं, सिर फोड़ते हैं और वहाँ बलवा होने का डर आज भी बना हुआ है। आस्ट्रिया के जाने से इटली को क्या लाभ हुआ ? नाम का ही लाभ हुआ। जिन सुधारों के लिए जंग मचा, वे सुधार हुए नहीं, प्रजा की हालत सुधरी नहीं।

हिन्दुस्तान की ऐसी दशा करने का तो आपका इरादा नहीं ही होगा। मैं मानता हूँ कि आपका विचार हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगों को सुखी करने का होगा, यह नहीं कि आप या मैं राजसत्ता ले लूँ। अगर ऐसा है तो हमें एक ही विचार करना चाहिए। वह यह कि प्रजा स्वतन्त्र कैसे हो ?

आप कुबूल करेंगे कि कुछ देशी रियासतों में प्रजा कुचली जाती है। वहाँ के शासक नीचता से लोगों को कुचलते हैं। उनका जुल्म अंग्रेजों के जुल्म से भी ज्यादा है। ऐसा जुल्म अगर आप हिन्दुस्तान में चाहते हों, तो हमारी पटरी कभी नहीं बैठेगी।

मेरा स्वदेशाभिमान मुझे यह नहीं सिखाता कि देशी राजाओं के मातहत जिस तरह प्रजा कुचली जाती है उसी तरह उसे कुचलने दिया जाए। मुझमें बल होगा तो मैं देशी राजाओं के जुल्म के ख़िलाफ़ और अंग्रेजी जुल्म के ख़िलाफ़ जूझूँगा।

मेरा स्वदेशाभिमान मुझे यह नहीं सिखाता कि देशी राजाओं के मातहत जिस तरह प्रजा कुचली जाती है उसी तरह उसे कुचलने दिया जाए। मुझमें बल होगा तो मैं देशी राजाओं के जुल्म के ख़िलाफ़ और अंग्रेजी जुल्म के ख़िलाफ़ जूझूँगा।

स्वदेशाभिमान का अर्थ मैं देश का हित समझता हूँ। अगर देश का हित अंग्रेजों के हाथों होता हो, तो मैं आज अंग्रेजों को झुककर नमस्कार करूँगा। अगर कोई अंग्रेज कहे कि देश को आज़ाद करना चाहिए, जुल्म के ख़िलाफ़ होना चाहिए और लोगों की सेवा करनी चाहिए, तो उस अंग्रेज को मैं हिन्दुस्तानी मानकर उसका स्वागत करूँगा।

फिर, इटली की तरह जब हिन्दुस्तान को हथियार मिलें तभी वह लड़ सकता है, पर इस भगीरथ (बहुत बड़े) काम का तो मालूम होता है, आपने

विचार ही नहीं किया है। अंग्रेज गोला–बारूद से पूरी तरह लैस हैं, इससे मुझे डर नहीं लगता, लेकिन ऐसा तो दीखता है कि उनके हथियारों से उन्हीं के ख़िलाफ़ लड़ना हो, तो हिन्दुस्तान को हथियारबंद करना होगा।

अगर ऐसा हो सकता हो तो इनमें कितने साल लगेंगे? और तमाम हिन्दुस्तानियों को हथियारबंद करना तो हिन्दुस्तान को यूरोप सा बनाने जैसा होगा। अगर ऐसा हुआ तो आज यूरोप के जो बेहाल हैं वैसे ही हिन्दुस्तान के भी होंगे। थोड़े में हिन्दुस्तान को यूरोप की सभ्यता अपनानी होगी। ऐसा ही होने वाला हो तो अच्छी बात यह होगी कि जो अंग्रेज उस सभ्यता में कुशल हैं, उन्हीं को हम यहाँ रहने दें। उनसे थोड़ा–बहुत झगड़ कर कुछ हक हम पाएँगे, कुछ नहीं पाएँगे और अपने दिन गुजारेंगे।

लेकिन बात तो यह है कि हिन्दुस्तान की प्रजा कभी हथियार नहीं उठायेगी। न उठाये यह ठीक ही है।

पाठक : आप तो बहुत आगे बढ़ गये। सबके हथियारबंद होने की ज़रूरत नहीं। हम पहले तो कुछ अंग्रेजों का खून करके आतंक फैलाएँगे। फिर तो थोड़े लोग हथियारबंद होंगे, वे खुल्मखुल्ला लड़ेंगे। उसमें पहले तो बीस–पचीस लाख हिन्दुस्तानी ज़रूर मरेंगे, लेकिन आखिर हम देश को अंग्रेजों से जीत लेंगे। हम गुरील्ला (डाकुओं जैसी) लड़ाई लड़कर अंग्रेजों को हरा देंगे।

खून तो हमें अपना करना चाहिए, क्योंकि हम नामर्द बन गये हैं, इसीलिए हम खून का विचार करते हैं। ऐसा करके आप किसे आज़ाद करेंगे? हिन्दुस्तान की प्रजा ऐसा कभी नहीं चाहती। हम जैसे लोग ही जिन्होंने अधम सभ्यता रूपी भाँग पी है, नशे में ऐसा विचार करते हैं। खून करके जो लोग राज करेंगे, वे प्रजा को सुखी नहीं बना सकेंगे।

संपादक : आपका ख़्याल हिन्दुस्तान की पवित्र भूमि को राक्षसी बनाने का लगता है। अंग्रेजों का खून करके हिन्दुस्तान को छुड़ाएंगे ऐसा विचार करते हुए आपको त्रास क्यों नहीं होता? खून तो हमें अपना करना चाहिए, क्योंकि हम नामर्द बन गये हैं, इसीलिए हम खून का विचार करते हैं।

ऐसा करके आप किसे आज़ाद करेंगे? हिन्दुस्तान की प्रजा ऐसा कभी नहीं चाहती। हम जैसे लोग ही, जिन्होंने अधम सभ्यता रूपी भाँग पी है, नशे

में ऐसा विचार करते हैं। खून करके जो लोग राज करेंगे, वे प्रजा को सुखी नहीं बना सकेंगे। धींगड़ा ने जो खून किया है उससे या जो खून हिन्दुस्तान में हुए हैं उनसे देश को फायदा हुआ है, ऐसा अगर कोई मानता हो तो वह बड़ी भूल करता है। धींगड़ा को मैं देशाभिमानी मानता हूँ, लेकिन उसका देश प्रेम पागलपन से भरा था। उसने अपने शरीर का बलिदान गलत तरीके से दिया। उससे अंत में तो देश को नुकसान ही होने वाला है।

तमाम हिन्दुस्तानियों को हथियारबंद करना तो हिन्दुस्तान को यूरोप सा बनाने जैसा होगा। अगर ऐसा हुआ तो आज यूरोप के जो बेहाल हैं वैसे ही हिन्दुस्तान के भी होंगे। थोड़े में हिन्दुस्तान को यूरोप की सभ्यता अपनानी होगी। ऐसा ही होने वाला हो तो अच्छी बात यह होगी कि जो अंग्रेज उस सभ्यता में कुशल हैं।

पाठक : लेकिन आपको इतना तो कुबूल करना ही होगा कि अंग्रेज इस खून से डर गये हैं और लॉर्ड मॉर्ले ने जो कुछ हमें दिया है वह ऐसे डर से ही दिया है।

संपादक : अंग्रेज जैसे डरपोक प्रजा हैं वैसे बहादुर भी हैं। गोला–बारूद का असर उन पर तुरन्त होता है, ऐसा मैं मानता हूँ। संभव है, लॉर्ड मॉर्ले ने हमें जो कुछ दिया वह डर से दिया हो, लेकिन डर से मिली हुई चीज जब तक डर बना रहता है तभी तक टिक सकती है।



आश्चर्य है, वैद्य मरते हैं, डॉक्टर मरते हैं, उनके पीछे हम भटकते हैं। लेकिन राम जो मरता नहीं है, हमेशा जिन्दा रहता है और अचूक वैद्य है, उसे हम भूल जाते हैं।

गोला-बारूद

पाठक : डर से दिया हुआ जब तक डर रहे तभी तक टिक सकता है, यह तो आपने विचित्र बात कही। जो दिया सो दिया। उसमें फिर क्या हेरफेर हो सकता है?

संपादक : ऐसा नहीं है। १८५७ की घोषणा बलवे के अंत में लोगों में शान्ति कायम रखने के लिए की गई थी, जब शान्ति हो गई और लोग भोले दिल के बन गये तब उसका अर्थ बदल गया। अगर मैं सज़ा के डर से चोरी न करूँ, तो सज़ा का डर मिट जाने पर चोरी करने की मेरी फिर से इच्छा होगी और मैं चोरी करूँगा।

यह तो बहुत ही साधारण अनुभव है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। हमने मान लिया है कि डाँट-डपटकर लोगों से काम लिया जा सकता है और इसलिए हम ऐसा करते आए हैं।

अंग्रेजों ने जो कुछ पाया वह मार-काट करके पाया, इसलिए हम भी वैसा ही करके मनचाही चीज पाएँ। अंग्रेजों ने मार-काट की और हम भी कर सकते हैं, यह बात तो ठीक है, लेकिन मार-काट से जैसी चीज उन्हें मिली वैसी ही हम भी ले सकते हैं। आप कुबूल करेंगे कि वैसी चीज हमें नहीं चाहिए।

पाठक : आपकी यह बात आपके ख़िलाफ़ जाती है, ऐसा आपको नहीं लगता? आपको स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजों ने खुद जो कुछ हासिल किया है, वह मार-काट करके ही हासिल किया है। आप कह चुके हैं कि मार-काट से उन्होंने जो कुछ हासिल किया है वह बेकार है, यह मुझे याद है इससे मेरी दलील को धक्का नहीं पहुँचता।

उन्होंने बेकार चीज पाने का सोचा और उसे पाया। मतलब यह कि उन्होंने अपनी मुराद पूरी की। साधन क्या था, इसकी चिन्ता हम क्यों करें? अगर हमारी मुराद अच्छी हो तो क्या उसे हम चाहे जिस साधन से, मार-काट करके भी पूरा नहीं करेंगे? चोर मेरे घर में घुसे तब क्या मैं साधन का विचार करूँगा? मेरा धर्म तो उसे किसी भी तरह बाहर निकालने का ही होगा।

ऐसा लगता है कि आप यह तो कुबूल करते हैं कि हमें सरकार के पास अर्जियां भेजने से कुछ नहीं मिला है और न आगे कभी मिलने वाला है। तो फिर उन्हें मारकर हम क्यों न लें? ज़रूरत हो उतनी मार का डर हम हमेशा बनाये रखेंगे। बच्चा अगर आग में पैर रखे और उसे आग से बचाने के लिए हम उस पर रोक लगाएँ, तो आप भी इसे दोष नहीं मानेंगे। किसी भी तरह हमें अपना काम पूरा कर लेना है।

संपादक : आपने दलील तो अच्छी की। वह ऐसी है कि बहुतों ने उससे धोखा खाया है। मैं भी ऐसी ही दलील करता था, लेकिन अब मेरी आँखें खुल गई हैं और मैं अपनी गलती समझ सकता हूँ। आपको वह गलती बताने की कोशिश करूँगा।

पहले तो इस दलील पर विचार करें कि अंग्रेजों ने जो कुछ पाया वह मार–काट करके पाया, इसलिए हम भी वैसा ही करके मनचाही चीज पाएँ। अंग्रेजों ने मार–काट की और हम भी कर सकते हैं, यह बात तो ठीक है, लेकिन मार–काट से जैसी चीज उन्हें मिली वैसी ही हम भी ले सकते हैं। आप कुबूल करेंगे कि वैसी चीज हमें नहीं चाहिए।

आप मानते हैं कि साधन और साध्य, ज़रिया और मुराद के बीच कोई संबंध नहीं है। यह बहुत बड़ी भूल है। इस भूल के कारण जो लोग धार्मिक कहलाते हैं, उन्होंने घोर कर्म किये हैं। यह तो धतूरे का पौधा लगाकर मोगरे के फूल की इच्छा करने जैसा हुआ। मेरे लिए समुद्र पार करने का साधन जहाज ही हो सकता है। अगर मैं पानी में बैलगाड़ी डाल दूँ तो गाड़ी और मैं दोनों समुद्र के तले पहुँच जाएँगे। जैसे देव वैसी पूजा यह वाक्य बहुत सोचने लायक है। उसका गलत अर्थ करके लोग भुलावे में पड़ गए हैं। साधन बीज है और साध्य (हासिल करने की चीज) पेड़ है।

साधन और साध्य, ज़रिया और मुराद के बीच कोई संबंध नहीं है। यह बहुत बड़ी भूल है। इस भूल के कारण जो लोग धार्मिक कहलाते हैं, उन्होंने घोर कर्म किये हैं। यह तो धतूरे का पौधा लगाकर मोगरे के फूल की इच्छा करने जैसा हुआ। मेरे लिए समुद्र पार करने का साधन जहाज ही हो सकता है। अगर मैं पानी में बैलगाड़ी डाल दूँ तो वह गाड़ी और मैं दोनों समुद्र के तले पहुँच जाएँगे। जैसे देव वैसी पूजा।

इसलिए जितना सम्बन्ध बीज और पेड़ के बीच है, उतना ही साधना और साध्य के बीच है। शैतान को भजकर मैं ईश्वर भजन का फल पाऊं, यह कभी हो ही नहीं सकता। इसलिए यह कहना कि हमें तो ईश्वर को ही भजना है, साधन भले शैतान हो, बिल्कुल अज्ञान की बात है। जैसी करनी वैसी भरनी।

अंग्रेजों ने मार–काट करके १८३३ में वोट के विशेष अधिकार पाए। क्या मार–काट करके वे अपना फ़र्ज समझ सके? उनकी मुराद अधिकार पाने की थी, इसलिए उन्होंने मार–काट मचाकर अधिकार पा लिए। सच्चे अधिकार तो फ़र्ज के फल हैं, वे अधिकार उन्होंने नहीं पाए। नतीजा यह हुआ कि सबने अधिकार पाने का प्रयत्न किया, लेकिन फ़र्ज सो गया। जहाँ सभी अधिकार की बात करें, वहाँ कौन किसको दे? वे कोई भी फ़र्ज अदा नहीं करते, ऐसा कहने का मतलब यहाँ नहीं है, लेकिन जो अधिकार वे माँगते थे उन्हें हासिल करके उन्होंने वे फ़र्ज पूरे नहीं किये जो उन्हें करने चाहिए थे।

साधन बीज है और साध्य हासिल करने की चीज पेड़ है। इसलिए जितना सम्बन्ध बीज और पेड़ के बीच है, उतना ही साधना और साध्य के बीच है। शैतान को भजकर मैं ईश्वर भजन का फल पाऊं, यह कभी हो ही नहीं सकता। इसलिए यह कहना कि हमें तो ईश्वर को ही भजना है, साधन भले शैतान हो, बिल्कुल अज्ञान की बात है। जैसी करनी वैसी भरनी।

उन्होंने योग्यता प्राप्त नहीं की, इसलिए उनके अधिकार उनकी गर्दन पर जुए की तरह सवार हो बैठे हैं। इसलिए जो कुछ उन्होंने पाया है, वह उनके साधन का ही परिणाम है। जैसी चीज उन्हें चाहिए थी वैसे साधन उन्होंने काम में लिये।

मुझे अगर आपसे आपकी घड़ी छीन लेनी हो, तो बेशक आपके साथ मुझे मार–पीट करनी होगी, लेकिन अगर मुझे आपकी घड़ी खरीदनी हो, तो आपको दाम देने होंगे। अगर मुझे बख्शीश के तौर पर आपकी घड़ी लेनी होगी, तो मुझे आपसे विनती करनी होगी। घड़ी पाने के लिए मैं जो साधन काम में लूँगा, उसके अनुसार वह चोरी का माल, मेरा माल या बख्शीश की चीज होगी। तीन साधनों के तीन अलग परिणाम आएँगे। तब आप कैसे कह सकते हैं कि साधन की कोई चिन्ता नहीं?

अब चोर को घर से निकालने की मिसाल लें। मैं आपसे इसमें सहमत नहीं हूँ कि चोर को निकालने के लिए चाहे जो साधन काम में लिया जा सकता है।

अगर मेरे घर में मेरा पिता चोरी करने आएगा, तो मैं एक साधन काम में लूँगा। अगर कोई मेरी पहचान को चोरी करने आएगा, तो मैं यही साधन काम में नहीं लूँगा और कोई अनजान आदमी आएगा, तो मैं तीसरा साधन काम में लूँगा। अगर वह गोरा हो तो एक साधन और हिन्दुस्तानी हो तो दूसरा साधन काम में लाना चाहिए, ऐसा भी शायद आप कहेंगे। अगर कोई मुर्दार लड़का चोरी करने आया होगा, तो मैं बिल्कुल दूसरा ही साधन काम में लूँगा।

अगर वह मेरी बराबरी का होगा, तो और ही कोई साधन मैं काम में लूँगा और अगर वह हथियारबंद तगड़ा आदमी होगा, तो मैं चुपचाप सो रहूँगा। इसमें पिता से लेकर ताकतवर आदमी तक अलग-अलग साधन इस्तेमाल किये जाएँगे। पिता होगा तो भी मुझे लगता है कि मैं सो रहूँगा और हथियार से लैस कोई होगा तो भी मैं सो रहूँगा। पिता में भी बल है, हथियारबंद आदमी में भी बल है। दोनों बलों के बस होकर मैं अपनी चीज को जाने दूँगा।

पिता का बल मुझे दया से रुलाएगा। हथियारबंद आदमी का बल मेरे मन में गुस्सा पैदा करेगा, हम कट्टर दुश्मन हो जाएँगे। ऐसी मुश्किल हालत है। इन मिसालों से हम दोनों साधनों के निर्णय पर तो नहीं पहुँच सकेंगे। मुझे तो सब चोरों के बारे में क्या करना चाहिए यह सूझता है, लेकिन उस इलाज से आप घबरा जाएँगे, इसलिए मैं आपके सामने उसे नहीं रखता। आप इसे समझ लें और अगर नहीं समझेंगे तो हर वक्त आपको अलग साधन काम में लेने होंगे, लेकिन आपने इतना तो देखा कि चोर को निकालने के लिए चाहे जो साधन काम नहीं देगा और जैसा साधन आपका होगा उसके मुताबिक नतीजा आयेगा।

अंग्रेजों ने मार-काट करके १८३३ में वोट के विशेष अधिकार पाए। क्या मार-काट करके वे अपना फ़र्ज समझ सके ? उनकी मुराद अधिकार पाने की थी, इसलिए उन्होंने मार-काट मचाकर अधिकार पा लिये। सच्चे अधिकार तो फ़र्ज के फल हैं, वे अधिकार उन्होंने नहीं पाये। नतीजा यह हुआ कि सबने अधिकार पाने का प्रयत्न किया, लेकिन फ़र्ज सो गया।

आपका धर्म किसी भी साधन से चोर को घर से निकालने का हरगिज नहीं है।

जरा आगे बढ़ें। वह हथियारबंद आदमी आपकी चीज ले गया है। आपने उसे याद रखा है। आपके मन में उस पर गुस्सा भरा है। आप उस लुच्चे को अपने लिए नहीं, लेकिन लोगों के कल्याण के लिए सज़ा देना चाहते हैं। आपने कुछ आदमी जमा किए। उसके घर पर आपने धावा बोलने का निश्चय किया। उसे मालूम हुआ।

वह भागा। उसने दूसरे लुटेरे जमा किये। वह भी खीजा हुआ है। अब तो उसने आपका घर दिन-दहाड़े लूटने का संदेशा आपको भेजा है। आप उसके मुकाबले के लिए तैयार बैठे हैं। इस बीच लुटेरा आपके आसपास के लोगों को हैरान करता है। वे आपसे शिकायत करते हैं। आप कहते हैं: ''यह सब मैं आप ही के लिए तो करता हूँ मेरा माल गया उसकी तो कोई बिसात ही नहीं'' लोग कहते हैं: ''पहले तो वह हमें लूटता नहीं था।

अच्छे नतीजे लाने के लिए अच्छे ही साधन चाहिए और अगर सब नहीं तो ज्यादातर मामलों में हथियार बल से दयाबल ज्यादा ताकतवर साबित होता है। हथियार में हानि है, दया में कभी नहीं।

आपने जब से उसके साथ लड़ाई शुरू की है तभी से उसने यह काम शुरू किया है।'' आप दुविधा में फँस जाते हैं। गरीबों के ऊपर आपको रहम है। उनकी बात सही है। अब क्या किया जाए? क्या लुटेरे को छोड़ दिया जाए? इससे तो आपकी इज़्ज़त चली जायेगी। इज़्ज़त सबको प्यारी होती है। आप गरीबों से कहते हैं: ''कोई फिक्र नहीं। आइये, मेरा धन आपका ही है। मैं आपको हथियार देता हूँ। मैं आपको उनका उपयोग सिखाऊंगा।

आप उस बदमाश को मारिए, छोड़िए नहीं'', यों लड़ाई बढ़ी। लुटेरे बढ़े। लोगों ने खुद होकर मुसीबत मोल ली। चोर से बदला लेने का परिणाम यह आया कि नींद बेचकर जागरण मोल लिया। जहाँ शांति थी वहाँ अशांति पैदा हुई। पहले तो जब मौत आती तभी मरते थे। अब तो सदा ही मरने के दिन आए। लोग हिम्मत हारकर पस्तहिम्मत बने। इसमें मैंने बढ़ा-चढ़ाकर कुछ नहीं कहा है, यह आप धीरज से सोचेंगे तो देख सकेंगे। यह एक साधन हुआ।

अब दूसरे साधन की जाँच करें। चोर को आप अज्ञानी मान लेते हैं। कभी मौका मिलने पर उसे समझाने का आपने सोचा है। आप यह भी सोचते हैं कि वह भी हमारे जैसा आदमी है। उसने किस इरादे से चोरी की, यह आपको क्या मालूम? आपके लिए अच्छा रास्ता तो यही है कि जब मौका मिले तब आप उस आदमी के भीतर से चोरी का बीज ही निकाल दें। ऐसा आप सोच रहे हैं, इतने में वे भाई साहब फिर से चोरी करने आते हैं। आप नाराज नहीं होते। आपको उस पर दया आती है। आप सोचते हैं कि यह आदमी रोगी है। आप खिड़की-दरवाजे खुले कर देते हैं। आप अपनी सोने की जगह बदल लेते हैं। आप अपनी चीजें झट ले जाई जा सकें इस तरह रख देते हैं। चोर आता है। वह घबराता है। यह सब उसे नया ही मालूम होता है। माल तो वह ले जाता है, लेकिन उसका मन चक्कर में पड़ जाता है। वह गाँव में जाँच-पड़ताल करता है। आपकी दया के बारे में उसको मालूम होता है। वह पछताता है और आपसे माफी माँगता है।

जहाँ जो भी आदमी नीच काम करता होगा वहाँ-वहाँ पहुँचना होगा और सामने वाले के बच्चों के प्राण लेने के बजाय अपने प्राणों की आहुति देनी पड़े, इतना पुरुषार्थ आप करना चाहें तो कर सकते हैं, आप स्वतंत्र हैं। पर यह बात बिल्कुल असंभव है।

आपकी चीजें वापस ले आता है। वह चोरी का धंधा छोड़ देता है। आपका सेवक बन जाता है। आप उसे काम-धंधे से लगा देते हैं। यह दूसरा साधन है।

आप देखते हैं कि अलग-अलग साधनों के अलग-अलग नतीजे आते हैं। सब चोर ऐसा ही बरताव करेंगे या सब में आपका-सा दया भाव होगा, ऐसा मैं इससे साबित नहीं करना चाहता, लेकिन यही दिखाना चाहता हूँ कि अच्छे नतीजे लाने के लिए अच्छे ही साधन चाहिए और अगर सब नहीं तो ज्यादातर मामलों में हथियार बल से दयाबल ज्यादा ताकतवर साबित होता है। हथियार में हानि है, दया में कभी नहीं।

अब अर्ज़ी की बात लें, जिसके पीछे बल नहीं है वह अर्ज़ी निकम्मी है, इसमें कोई शक नहीं। फिर भी स्व. न्यायमूर्ति रानाडे कहते थे कि अर्ज़ी लोगों को तालीम देने का एक साधन है। उससे लोगों को अपनी स्थिति का भान कराया जा सकता है और राजकर्ता को चेतावनी दी जा सकती है। यों सोचें

तो अर्ज़ी निकम्मी चीज है। बराबरी का आदमी अर्ज़ी करेगा तो वह उसकी नम्रता की निशानी मानी जाएगी। गुलाम अर्ज़ी करेगा तो वह उसकी गुलामी की निशानी होगी। जिस अर्ज़ी के पीछे बल है वह बराबरी के आदमी की अर्ज़ी है और वह अपनी माँग अर्ज़ी के रूप में रखता है, यह उसकी खानदानियत को बताता है।

अर्ज़ी के पीछे दो तरह के बल होते हैं, ''अगर आप नहीं देंगे तो हम आपको मारेंगे।'' यह गोला–बारूद का बल है। इसका बुरा नतीजा हम देख चुके। दूसरा बल यह है: ''अगर आप नहीं देंगे तो हम आपके अर्ज़दार नहीं रहेंगे। हम अर्ज़दार होंगे तो आप बादशाह बने रहेंगे। हम आपके साथ कोई व्यवहार नहीं रखेंगे।'' इस बल को चाहे दयाबल कहें, चाहे आत्मबल कहें या सत्याग्रह कहें। यह बल अविनाशी है और इस बल का उपयोग करने वाला अपनी हालत को बराबर समझता है। इसका समावेश हमारे बुजुर्गों ने 'एक नहीं सब रोगों की दवा' में किया है। यह बल जिसमें है उसका हथियार बल कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

बच्चों को रोकने में आप सिर्फ़ बच्चों का स्वार्थ देखते हैं। जिसके ऊपर आप अंकुश रखना चाहते हैं, उस पर उसके स्वार्थ के लिए ही अंकुश रखेंगे। यह मिसाल अंग्रेजों पर जरा भी लागू नहीं होती। आप अंग्रेजों पर जो हथियार बल का उपयोग करना चाहते हैं, उसमें आप अपना ही यानी प्रजा का स्वार्थ देखते हैं। उसमें दया जरा भी नहीं है।

बच्चा अगर आग में पैर रखे, तो उसको दबाने की मिसाल की छानबीन करने में तो आप हार जाएँगे। बच्चों के साथ आप क्या करेंगे? मान लीजिए कि बच्चा ऐसा जोर करे कि आपको मारकर वह आग में जा पड़े, तब तो आग में पड़े बिना वह रहेगा ही नहीं। इसका उपाय आपके पास यह है: या तो आग में पड़ने से रोकने के लिए आप उसके प्राण ले लें या उसका आग में पड़ना आपसे देखा नहीं जाता इसलिए आप स्वयं आग में पड़कर अपनी जान दे दें।

आप बच्चों के प्राण तो नहीं ही लेंगे। आपमें अगर संपूर्ण दया भाव न हो, तो मुमकिन है कि आप अपने प्राण नहीं देंगे, तो फिर लाचारी से आप बच्चों को आग में कूदने देंगे। इस तरह आप बच्चों पर हथियार–बल का उपयोग नहीं करते हैं। बच्चों को आप और किसी तरह रोक सकें तो रोकेंगे

और वह बल कम दर्जे का, लेकिन हथियार बल ही होगा ऐसा भी आप न समझ लें। वह बल और ही प्रकार का है। उसी को समझ लेना है।

बच्चों को रोकने में आप सिर्फ़ बच्चों का स्वार्थ देखते हैं। जिसके ऊपर आप अंकुश रखना चाहते हैं, उस पर उसके स्वार्थ के लिए ही अंकुश रखेंगे। यह मिसाल अंग्रेजों पर जरा भी लागू नहीं होती। आप अंग्रेजों पर जो हथियार बल का उपयोग करना चाहते हैं, उसमें आप अपना ही यानी प्रजा का स्वार्थ देखते हैं। उसमें दया जरा भी नहीं है।

अगर आप यों कहें कि अंग्रेज जो नीच काम करते हैं वह आग है, वे आग में अज्ञान के कारण जाते हैं और आप दया से अज्ञानी को यानी बच्चों को उससे बचाना चाहते हैं, तो इस प्रयोग को आजमाने के लिए आपको जहाँ–जहाँ जो भी आदमी नीच काम करता होगा वहाँ–वहाँ पहुँचना होगा और सामने वाले के बच्चों के प्राण लेने के बजाय अपने प्राणों की आहुति देनी पड़े, इतना पुरुषार्थ आप करना चाहें तो कर सकते हैं, आप स्वतंत्र हैं। पर यह बात बिल्कुल असंभव है।



देश भक्ति मनुष्य का पहला गुण है। इसके बिना वह संसार में सिर उठाकर नहीं चल सकता। उस देशभक्ति का त्याग करना चाहिए जो दूसरे राष्ट्रों को आफ़त में डालकर बड़प्पन पाना चाहती है।

सत्याग्रह–आत्मबल

पाठक : आप जिस सत्याग्रह या आत्मबल की बात करते हैं, उसका इतिहास में कोई प्रमाण है? आज तक दुनिया का एक भी राष्ट्र इस बल से ऊपर चढ़ा हो, ऐसा देखने में नहीं आता। मार–काट के बिना बुरे लोग सीधे रहेंगे ही नहीं, ऐसा विश्वास अभी भी मेरे मन में बना हुआ है।

संपादक : कवि तुलसीदास जी ने लिखा है :

दया धरम को मूल है, पाप मूल अभिमान,
तुलसी दया न छाँड़िये, जब लग घट में प्रान।

मुझे तो यह वाक्य शास्त्र–वचन जैसा लगता है। जैसे दो और दो चार ही होते हैं, उतना ही भरोसा मुझे ऊपर के वचन पर है। दयाबल आत्मबल है, सत्याग्रह है और इस बल के प्रमाण पग–पग पर दिखाई देते हैं। अगर यह बल नहीं होता, तो पृथ्वी रसातल (सात पातालों में से एक) में पहुँच गई होती।

दुनिया में इतने लोग आज भी जिन्दा हैं, यह बताता है कि दुनिया का आधार हथियार बल पर नहीं है, बल्कि सत्य, दया और आत्मबल पर है।

लेकिन आप तो इतिहास प्रमाण चाहते हैं। इसके लिए हमें इतिहास का अर्थ जानना होगा।

'इतिहास' का शब्दार्थ है : 'ऐसा हो गया।' ऐसा अर्थ करें तो आपको सत्याग्रह के कई प्रमाण दिये जा सकेंगे। 'इतिहास' जिस अंग्रेजी शब्द का तरजुमा है और जिस शब्द का अर्थ बादशाहों या राजाओं की इतिहास होता है, उसका अर्थ लेने से सत्याग्रह का प्रमाण नहीं मिल सकता। जस्ते की खान में आप अगर चाँदी ढूँढने जाएँ, तो वह कैसे मिलेगी? 'हिस्टरी' में दुनिया के कोलाहल की ही कहानी मिलेगी। इसलिए गोरे लोगों में कहावत है कि जिस राष्ट्र की 'हिस्टरी' (कोलाहल) नहीं है वह राष्ट्र सुखी है। राजा लोग कैसे खेलते थे, कैसे खून करते थे, कैसे बैर रखते थे, यह सब 'हिस्टरी' में मिलता है। अगर यही इतिहास होता, अगर इतना ही हुआ होता, तब तो यह दुनिया कब की डूब गई होती। अगर दुनिया की कथा लड़ाई से शुरू हुई होती, तो

आज एक भी आदमी ज़िंदा नहीं रहता। जो प्रजा लड़ाई का ही भोग (शिकार) बन गई, उसकी ऐसी ही दशा हुई है। आस्ट्रेलिया के हब्शी लोगों का नामोनिशान मिट गया है। आस्ट्रेलिया के गोरों ने उनमें से शायद ही किसी को जीने दिया है। जिनकी जड़ ही खत्म हो गई, वे लोग सत्याग्रही नहीं थे। जो ज़िंदा रहेंगे वे देखेंगे कि आस्ट्रेलिया के गोरे लोगों के भी यही हाल होंगे। 'जो तलवार चलाते हैं उनकी मौत तलवार से ही होती है।' हमारे यहाँ ऐसी कहावत है कि 'तैराक की मौत पानी में'।

दुनिया में इतने लोग आज भी ज़िन्दा हैं, यह बताता है कि दुनिया का आधार हथियार बल पर नहीं है, बल्कि सत्य, दया या आत्मबल पर है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि दुनिया लड़ाई के हंगामे के बावजूद टिकी हुई है। इसलिए लड़ाई के बल के बजाय दूसरा ही बल उसका आधार है।

सरकार तो कहेगी कि हम उसके सामने नंगे होकर नाचें। तो क्या हम नाचेंगे? अगर मैं सत्याग्रही होऊँ तो सरकार से कहूँगा ''यह कानून आप अपने घर में रखिए। मैं न तो आपके सामने नंगा होने वाला हूँ और न नाचने वाला हूँ।'' लेकिन हम ऐसे असत्याग्रही हो गये हैं कि सरकार के जुल्म के सामने झुककर नंगे होकर नाचने से भी ज्यादा नीच काम करते हैं।

हजारों बल्कि लाखों लोग प्रेम के बस रहकर अपना जीवन बसर करते हैं। करोड़ों कुटुम्बों का क्लेश प्रेम की भावना में समा जाता है, डूब जाता है। सैकड़ों राष्ट्र मेलजोल से रहे हैं, इसको 'हिस्टरी' नोट नहीं करती, 'हिस्टरी' कर भी नहीं सकती। जब इस दया की, प्रेम की और सत्य की धारा रुकती है, टूटती है, तभी इतिहास में वह लिखा जाता है। एक कुटुम्ब के दो भाई लड़े। इसमें एक ने दूसरे के ख़िलाफ सत्याग्रह का बल काम में लिया। दोनों फिर से मिल-जुलकर रहने लगे। इसका नोट कौन लेता है? अगर दोनों भाइयों में वकीलों की मदद से या दूसरे कारणों से वैरभाव बढ़ता और वे हथियारों या अदालतों (अदालत एक तरह का हथियार-बल, शरीर-बल ही है) के ज़रिये लड़ते तो उनके नाम अखबारों में छपते, (अड़ौस-पड़ौस के लोग जानते और शायद इतिहास में भी लिखे जाते। जो बात कुटुम्बों, जमातों और इतिहास के बारे में सच है, वही राष्ट्र के बारे में भी समझ लेना चाहिए। कुटुम्ब के लिए एक कानून और राष्ट्र के लिए दूसरा, ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है। 'हिस्टरी'

अस्वाभाविक बातों को दर्ज करती है। सत्याग्रह स्वाभाविक है, इसलिए उसे दर्ज करने की ज़रूरत ही नहीं है।

पाठक : आपके कहे मुताबिक तो यही समझ में आता है कि सत्याग्रह की मिसालें इतिहास में नहीं लिखी जा सकतीं। इस सत्याग्रह को ज्यादा समझने की ज़रूरत है। आप जो कुछ कहना चाहते हैं, उसे ज्यादा साफ़ शब्दों में कहेंगे तो अच्छा होगा।

संपादक : सत्याग्रह या आत्मबल को अंग्रेजी में 'पैसिव रेज़िस्टेन्स' कहा जाता है। जिन लोगों ने अपने अधिकार पाने के लिए खुद दुःख सहन किया था, उनके दुःख सहने के ढंग के लिए यह शब्द बरता गया है। उसका ध्येय लड़ाई के ध्येय से उल्टा है। जब मुझे कोई काम पसन्द न आये और वह काम मैं न करूँ, तो उसमें मैं सत्याग्रह या आत्मबल का उपयोग करता हूँ।

अगर लोग एक बार सीख लें कि जो कानून हमें अन्यायी मालूम हो उसे मानना नामर्दगी है, तो हमें किसी का भी जुल्म बाँध नहीं सकता। यही स्वराज्य की कुंजी है।

मिसाल के तौर पर मुझे लागू होने वाला कोई कानून सरकार ने पास किया। वह कानून मुझे पसन्द नहीं है। अब अगर मैं सरकार पर हमला करके यह कानून रद्द करवाता हूँ, तो कहा जाएगा कि मैंने शरीर बल का उपयोग किया। अगर मैं उस कानून को मंजूर ही न करूँ और उस कारण से होने वाली सज़ा भुगत लूँ, तो कहा जाएगा कि मैंने आत्मबल या सत्याग्रह से काम लिया। सत्याग्रह में मैं अपना ही बलिदान देता हूँ।

यह तो सब कहेंगे कि दूसरे का बलिदान लेने से अपना बलिदान देना ज्यादा अच्छा है। इसके सिवा सत्याग्रह से लड़ते हुए अगर लड़ाई गलत ठहरी तो सिर्फ़ लड़ाई छेड़ने वाला ही दुःख भोगता है यानी अपनी भूल की सज़ा वह खुद भोगता है। ऐसी कई घटनाएँ हुई हैं जिनमें लोग गलती से शामिल हुए थे। कोई भी आदमी दावे से यह नहीं कह सकता कि फलां काम खराब ही है, लेकिन जिसे वह खराब लगा, उसके लिए तो वह खराब ही है। अगर ऐसा ही है तो फिर उसे वह काम नहीं करना चाहिए और उसके लिए दुःख भोगना, कष्ट सहन करना चाहिए। यही सत्याग्रह की कुंजी है।

पाठक : तब तो आप कानून के ख़िलाफ होते हैं! यह बेवफाई कही जाएगी। हमारी गिनती हमेशा कानून को मानने वाली प्रजा में होती है। आप तो 'एक्स्ट्रीमिस्ट' से भी आगे बढ़ते दीखते हैं। 'एक्स्ट्रीमिस्ट' कहता है कि जो कानून बन चुके हैं उन्हें तो मानना ही चाहिए, लेकिन कानून खराब हो तो उनके बनाने वालों को मारकर भगा देना चाहिए।

संपादक : मैं आगे बढ़ता हूँ या पीछे रहता हूँ, इसकी परवाह न आपको होनी चाहिए, न मुझे। हम तो जो अच्छा है उसे खोजना चाहते हैं और उसके मुताबिक बरतना चाहते हैं।

ठगों के गाँव में अगर बहुत से लोग यह कहें कि ठग विद्या सीखनी ही चाहिए, तो क्या कोई साधु ठग बन जाएगा? हरगिज़ नहीं। अन्यायी कानून को मानना चाहिए, यह वहम जब तक दूर नहीं होता तब तक हमारी गुलामी जाने वाली नहीं है और इस वहम को सिर्फ़ सत्याग्रही ही दूर कर सकता है।

हम कानून को मानने वाली प्रजा हैं, इसका सही अर्थ तो यह है कि हम सत्याग्रही प्रजा हैं। कानून जब पसन्द न आये तब हम कानून बनाने वालों का सिर नहीं तोड़ते, बल्कि उन्हें रद्द कराने के लिए खुद उपवास करते हैं, खुद दु:ख उठाते हैं।

हमें अच्छे या बुरे कानून को मानना चाहिए, ऐसा अर्थ तो आजकल का है। पहले ऐसा नहीं था। तब चाहे जिस कानून को लोग तोड़ते थे और उसकी सज़ा भोगते थे।

कानून हमें पसन्द न हो तो भी उनके मुताबिक चलना चाहिए, यह सिखावन मर्दानगी के ख़िलाफ है, धर्म के ख़िलाफ है और गुलामी की हद है।

सरकार तो कहेगी कि हम उसके सामने नंगे होकर नाचें। तो क्या हम नाचेंगे? अगर मैं सत्याग्रही होऊँ तो सरकार से कहूँगा "यह कानून आप अपने घर में रखिये। मैं न तो आपके सामने नंगा होने वाला हूँ और न नाचने वाला हूँ।" लेकिन हम ऐसे असत्याग्रही हो गये हैं कि सरकार के जुल्म के सामने झुककर नंगे होकर नाचने से भी ज्यादा नीच काम करते हैं।

जिस आदमी में सच्ची इन्सानियत है, जो खुदा से ही डरता है, वह और किसी से नहीं डरेगा। दूसरे के बनाये हुए कानून उसके लिए बंधन कारक नहीं होते। बेचारी सरकार भी नहीं कहती कि 'तुम्हें ऐसा करना ही पड़ेगा' वह कहती है कि 'तुम ऐसा नहीं करोगे तो तुम्हें सज़ा होगी।' हम अपनी अधम दशा के कारण मान लेते हैं कि हमें 'ऐसा ही करना चाहिए,' यह हमारा

फ़र्ज़ है, यह हमारा धर्म है।

अगर लोग एक बार सीख लें कि जो कानून हमें अन्यायी मालूम हो उसे मानना नामर्दगी है, तो हमें किसी का भी जुल्म बाँध नहीं सकता। यही स्वराज्य की कुंजी है।

ज्यादा लोग जो कहें उसे थोड़े लोगों को मान लेना चाहिए, यह तो अनीश्वरी बात है, एक वहम है। ऐसी हजारों मिसालें मिलेंगी, जिनमें बहुतों ने जो कहा वह गलत निकला हो और थोड़े लोगों ने जो कहा वह सही निकला हो। सारे सुधार बहुत से लोगों के ख़िलाफ जाकर कुछ लोगों ने ही दाखिल करवाए हैं। ठगों के गाँव में अगर बहुत से लोग यह कहें कि ठग विद्या सीखनी ही चाहिए, तो क्या कोई साधु ठग बन जाएगा? हरगिज़ नहीं। अन्यायी कानून को मानना चाहिए, यह वहम जब तक दूर नहीं होता तब तक हमारी गुलामी जाने वाली नहीं है और इस वहम को सिर्फ़ सत्याग्रही ही दूर कर सकता है।

किसान किसी की तलवार बल के बस न तो कभी हुए हैं और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। वे मौत को हमेशा अपना तकिया बनाकर सोने वाली महान प्रजा हैं। उन्होंने मौत का डर छोड़ दिया है, इसलिए सबका डर छोड़ दिया है।

शरीर बल का उपयोग करना, गोला-बारूद काम में लाना, हमारे सत्याग्रह के कानून के ख़िलाफ है। इसका अर्थ तो यह हुआ कि हमें जो पसंद है वह दूसरे आदमी से हम जबरन करवाना चाहते हैं। अगर यह सही हो तो फिर वह सामने वाला आदमी भी अपनी पसंद का काम हमसे करवाने के लिए हम पर गोला-बारूद चलाने का हकदार है। इस तरह तो हम कभी एक राय पर पहुँचेंगे ही नहीं। कोल्हू के बैल की तरह आँखों पर पट्टी बाँधकर भले ही हम मान लें कि हम आगे बढ़ते हैं, लेकिन दरअसल तो बैल की तरह हम गोल-गोल चक्कर ही काटते रहते हैं। जो लोग ऐसा मानते हैं कि जो कानून खुद को नापसन्द है उसे मानने के लिए आदमी बँधा हुआ नहीं है, उन्हें तो सत्याग्रह को ही सही साधन मानना चाहिए, वरना बड़ा विकट नतीजा आयेगा।

पाठक : आप जो कहते हैं उस पर से मुझे लगता है कि सत्याग्रह कमज़ोर आदमियों के लिए काफी काम का है, लेकिन जब वे बलवान बन जाएँ तब तो उन्हें तोप ही चलाना चाहिए।

संपादक : यह तो आपने बड़े अज्ञान की बात कही। सत्याग्रह सर्वोपरि बल है। वह जब तोप बल से ज्यादा काम करता है, तो फिर कमज़ोरों का हथियार कैसे माना जाएगा? सत्याग्रह के लिए जो हिम्मत और बहादुरी चाहिए, वह तोप का बल रखने वाले के पास हो ही नहीं सकती। क्या आप यह मानते हैं कि डरपोक और कमज़ोर आदमी नापसन्द कानून को तोड़ सकेगा? 'एक्स्ट्रीमिस्ट' तोपबल-पशुबल के हिमायती हैं। वे क्यों कानून को मानने की बात कर रहे हैं? मैं उनका दोष नहीं निकालता। वे दूसरी कोई बात कर ही नहीं सकते। वे खुद जब अंग्रेजों को मारकर राज्य करेंगे तब आपसे और हमसे जबरन् कानून मनवाना चाहेंगे। उनके तरीके के लिए यही कहना ठीक है, लेकिन सत्याग्रही तो कहेगा कि जो कानून उसे पसन्द नहीं हैं उन्हें वह स्वीकार नहीं करेगा, फिर चाहे उसे तोप के मुँह पर बाँधकर उसकी धज्जियाँ क्यों न उड़ा दी जाएँ।

जो सत्य का सेवन नहीं करता, वह सत्य का बल, सत्य की ताक़त कैसे दिखा सकेगा? इसलिए सत्य की तो पूरी-पूरी ज़रूरत रहेगी ही। बड़े से बड़ा नुकसान होने पर भी सत्य को नहीं छोड़ा जा सकता। सत्य के लिए कुछ छिपाने को होता ही नहीं। इसलिए सत्याग्रही के लिए छिपी सेना की ज़रूरत नहीं होती।

आप क्या मानते हैं? तोप चलाकर सैकड़ों को मारने में हिम्मत की ज़रूरत है या हँसते-हँसते तोप के मुँह पर बँधकर धज्जियाँ उड़ने देने में हिम्मत की ज़रूरत है? खुद मौत को हथेली में रखकर जो चलता-फिरता है वह रणवीर है या दूसरों की मौत को अपने हाथ में रखता है वह रणवीर है?

यह निश्चित मानिए कि नामर्द आदमी घड़ी भर के लिए भी सत्याग्रही नहीं रह सकता।

हाँ, यह सही है कि शरीर से जो दुबला हो वह भी सत्याग्रही हो सकता है। एक आदमी भी सत्याग्रही हो सकता है और लाखों लोग भी हो सकते हैं। मर्द भी सत्याग्रही हो सकता है, औरत भी हो सकती है। उसे अपना लश्कर तैयार करने की ज़रूरत नहीं रहती। उसे पहलवानों की कुश्ती सीखने की ज़रूरत नहीं रहती। उसने अपने मन को काबू में किया कि फिर वह वनराज सिंह की तरह गर्जना कर सकता है और जो उसके दुश्मन बन बैठे हैं उनके दिल इस गर्जना से फट जाते हैं। सत्याग्रह ऐसी तलवार है, जिसके दोनों ओर धार है। उसे चाहे जैसे काम में लिया जा सकता है। जो उसे चलाता है और जिस पर वह चलाई जाती है, वे दोनों सुखी होते हैं। वह खून नहीं निकालती, लेकिन उससे



भी बड़ा परिणाम ला सकती है। उसको जंग नहीं लग सकती। उसे कोई चुराकर ले नहीं जा सकता। अगर सत्याग्रही दूसरे सत्याग्रही के साथ होड़ में उतरता है, तो उसमें उसे थकान लगती ही नहीं। सत्याग्रही की तलवार को म्यान की ज़रूरत नहीं रहती। उसे कोई छीन नहीं सकता। फिर भी सत्याग्रह को आप कमज़ोरों का हथियार मानें तो उसे अंधेर ही कहा जाएगा।

पाठक : आपने कहा कि वह हिन्दुस्तान का खास हथियार है। तो क्या हिन्दुस्तान में तोप के बल का कभी उपयोग नहीं हुआ है?

संपादक : आप हिंदुस्तान का अर्थ मुट्ठीभर राजा कहते हैं। मेरे मन में तो हिन्दुस्तान का अर्थ वे करोड़ों किसान हैं, जिनके सहारे राजा और हम सब जी रहे हैं।

राजा तो हथियार काम में लाएँगे ही। उनका वह रिवाज ही हो गया है। उन्हें हुक्म चलाना है, लेकिन हुक्म मानने वाले को तोपबल की ज़रूरत नहीं है। दुनिया के ज्यादातर लोग हुक्म मानने वाले हैं। उन्हें या तो तोप बल या सत्याग्रह का बल सिखाना चाहिए। जहाँ वे तोपबल सीखते हैं वहाँ राजा-प्रजा दोनों पागल जैसे हो जाते हैं। जहाँ हुक्म मानने वालों ने सत्याग्रह करना सीखा है वहाँ राजा का जुल्म उसकी तीन गज की तलवार से आगे नहीं जा सकता और हुक्म मानने वालों ने अन्यायी हुक्म की परवाह भी नहीं की है। किसान किसी के तलवार बल के बस न तो कभी हुए हैं और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। वे मौत को हमेशा अपना तकिया बनाकर सोने वाली महान प्रजा हैं। उन्होंने मौत का डर छोड़ दिया है, इसलिए सबका डर छोड़ दिया है। यहाँ मैं कुछ बढ़ा-चढ़ाकर तस्वीर खींचता हूँ, यह ठीक है लेकिन हम जो तलवार के बल से चकित हो गए हैं, उनके लिए यह कुछ ज्यादा नहीं है।

जान बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए या नहीं, ऐसा सवाल यहाँ मन में नहीं उठाना चाहिए। जिसे झूठ का बचाव करना है, वही ऐसे बेकार सवाल उठाता है। जिसे सत्य की ही राह लेनी है, उसके सामने ऐसे धर्म-संकट कभी आते ही नहीं।

बात यह है कि किसानों ने, प्रजा मंडलों ने अपने और राज्य के कारोबार में सत्याग्रह को काम में लिया है। जब राजा जुल्म करता है तब प्रजा रूठती है। यह सत्याग्रह ही है।

मुझे याद है कि एक रियासत में रैयत (प्रजा) को अमुक हुक्म पसन्द नहीं आया, इसलिए रैयत ने हिजरत (पलायन) करना, गाँव खाली करना शुरू कर दिया। राजा घबराये। उन्होंने रैयत से माफी माँगी और हुक्म वापस ले लिया। ऐसी मिसालें तो बहुत मिल सकती हैं। लेकिन वे ज्यादातर भारत भूमि की ही उपज होंगी। ऐसी रैयत जहाँ है वहीं स्वराज्य है। इसके बिना स्वराज्य कुराज्य है।

पाठक: तो क्या आप यह कहेंगे कि शरीर को कसने की ज़रूरत ही नहीं है?

जिस आदमी में सच्ची इन्सानियत है, जो खुदा से ही डरता है, वह और किसी से नहीं डरेगा। दूसरे के बनाए हुए कानून उसके लिए बंधन कारक नहीं होते।

संपादक : ऐसा मैं कभी नहीं कहूँगा। शरीर को कसे बिना सत्याग्रही होना मुश्किल है। अक्सर जिन शरीरों को गलत लाड़ लड़ाकर या सहला कर कमज़ोर बना दिया गया है, उनमें रहने वाला मन भी कमज़ोर होता है और जहाँ मन का बल नहीं है वहाँ आत्मबल कैसे हो सकता है? हमें बाल-विवाह वगैरा के कुरिवाज को और ऐश-आराम की बुराई को छोड़कर शरीर को कसना ही होगा। अगर मैं मरियल और कमज़ोर आदमी को यकायक तोप के मुँह पर खड़ा हो जाने के लिए कहूँ, तो लोग मेरी हँसी उड़ाएँगे।

पाठक : आपके कहने से तो ऐसा लगता है कि सत्याग्रही होना मामूली बात नहीं है और अगर ऐसा है तो कोई आदमी सत्याग्रही कैसे बन सकता है, यह आपको समझाना होगा।

संपादक : सत्याग्रही होना आसान है, लेकिन जितना वह आसान है उतना ही मुश्किल भी है। चौदह बरस का एक लड़का सत्याग्रही हुआ है, यह मेरे अनुभव की बात है। रोगी आदमी सत्याग्रही हुए हैं, यह भी मैंने देखा है। मैंने यह भी देखा है कि जो लोग शरीर से बलवान थे और दूसरी बातों में भी सुखी थे, वे सत्याग्रही नहीं हो सके।

अनुभव से मैं देखता हूँ कि जो देश के भले के लिए सत्याग्रही होना चाहता है, उसे ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए, गरीबी अपनानी चाहिए, सत्य का पालन तो करना ही चाहिए और हर हालत में अभय बनना चाहिए।

ब्रह्मचर्य एक महान व्रत है, जिसके बिना मन मजबूत नहीं होता। ब्रह्मचर्य का पालन न करने से मनुष्य वीर्यवान नहीं रहता, नामर्द और

कमज़ोर हो जाता है। जिसका मन विषय में भटकता है, वह क्या शेर मारेगा? यह बात अनगिनत मिसालों से साबित की जा सकती है। तब सवाल यह उठता है कि घर-संसारी को क्या करना चाहिए? लेकिन ऐसा सवाल उठने की कोई ज़रूरत नहीं। घर-संसारी ने जो संग किया (स्त्री की सोहबत की) वह विषय-भोग नहीं है, ऐसा कोई नहीं कहेगा। संतान पैदा करने के लिए ही अपनी स्त्री का संग करने की बात कही गयी है और सत्याग्रही को संतान पैदा करने की इच्छा नहीं होनी चाहिए। इसलिए संसारी होने पर भी वह ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है। यह बात ज्यादा खोलकर लिखने की ज़रूरत नहीं। स्त्री का क्या विचार है? यह सब कैसे हो सकता है? ऐसे विचार मन में पैदा होते हैं। फिर भी जिसे महान कार्यों में हिस्सा लेना है, उसे तो ऐसे सवालों का हल ढूँढना ही होगा।

सत्य का सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि दुनिया लड़ाई के हंगामे के बावजूद टिकी हुई है। इसलिए लड़ाई के बल के बजाय दूसरा ही बल उसका आधार है।

जैसे ब्रह्मचर्य की ज़रूरत है वैसे ही गरीबी को अपनाने की भी ज़रूरत है। पैसे का लोभ और सत्याग्रह का सेवन दोनों साथ-साथ कभी नहीं चल सकते, लेकिन मेरा मतलब यह नहीं है कि जिसके पास पैसा है वह उसे फेंक दे। फिर भी पैसे के बारे में लापरवाह रहने की ज़रूरत है। सत्याग्रह का सेवन करते हुए अगर पैसा चला जाये, तो चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

जो सत्य का सेवन नहीं करता, वह सत्य का बल, सत्य की ताक़त कैसे दिखा सकेगा? इसलिए सत्य की तो पूरी-पूरी ज़रूरत रहेगी ही। बड़े से बड़ा नुकसान होने पर भी सत्य को नहीं छोड़ा जा सकता। सत्य के लिए कुछ छिपाने को होता ही नहीं। इसलिए सत्याग्रही के लिए छिपी सेना की ज़रूरत नहीं होती। जान बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए या नहीं, ऐसा सवाल यहाँ मन में नहीं उठाना चाहिए। जिसे झूठ का बचाव करना है, वही ऐसे बेकार सवाल उठाता है। जिसे सत्य की ही राह लेनी है, उसके सामने ऐसे धर्म-संकट कभी आते ही नहीं। ऐसी मुश्किल हालत में आ पड़े तो भी सत्यवादी उसमें से उबर जाता है।

अभय के बिना तो सत्याग्रही की गाड़ी एक कदम भी आगे नहीं चल सकती। अभय संपूर्ण और सब बातों के लिए होना चाहिए। जमीन-जायदाद

का, झूठी इज्ज़त का, सगे–सम्बन्धियों का, राज–दरबार का, शरीर को पहुँचने वाली चोटों और मरण का अभय हो, तभी सत्याग्रह का पालन हो सकता है।

यह सब करना मुश्किल है, ऐसा मानकर इसे छोड़ नहीं देना चाहिए। जो सिर पर पड़ता है उसे सह लेने की शक्ति कुदरत ने हर मनुष्य को दी है। जिसे देश सेवा न करनी हो, उसे भी ऐसे गुणों का सेवन करना चाहिए।

अभय के बिना तो सत्याग्रही की गाड़ी एक कदम भी आगे नहीं चल सकती। अभय संपूर्ण और सब बातों के लिए होना चाहिए। जमीन–जायदाद का, झूठी इज्ज़त का, सगे–सम्बन्धियों का, राज–दरबार का, शरीर को पहुँचने वाली चोटों और मरण का अभय हो, तभी सत्याग्रह का पालन हो सकता है।

इसके सिवा हम यह भी समझ सकते हैं कि जिसे हथियार बल पाना होगा, उसे भी इन बातों की ज़रूरत रहेगी। रणवीर होना कोई ऐसी बात नहीं कि किसी ने इच्छा की और तुरन्त रणवीर हो गया। योद्धा को ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा, भिखारी बनना होगा। रण में जिसके भीतर अभय न हो वह लड़ नहीं सकता। उस योद्धा को सत्यव्रत का पालन करने की उतनी ज़रूरत नहीं है, ऐसा शायद किसी को लगे, लेकिन जहाँ अभय है वहाँ सत्य कुदरती तौर पर रहता ही है। मनुष्य जब सत्य को छोड़ता है तब किसी तरह के भय के कारण ही छोड़ता है।

इसलिए इन चार गुणों से डर जाने का कोई कारण नहीं है। फिर तलवारबाज़ को और भी कुछ बेकार कोशिशें करनी पड़ती हैं, जो सत्याग्रही को नहीं करनी पड़तीं। तलवारबाज़ को जो दूसरी कोशिशें करनी पड़ती हैं, उसका कारण भय है। अगर उसमें पूरी निडरता आ जाए तो उसी पल उसके हाथ से तलवार गिर जाएगी। फिर उसे तलवार के सहारे की ज़रूरत नहीं रहती। जिसकी किसी से दुश्मनी नहीं है, उसे तलवार की ज़रूरत ही नहीं है। सिंह के सामने आने वाले एक आदमी के हाथ की लाठी अपने–आप उठ गई। उसने देखा कि अभय का पाठ उसने सिर्फ़ ज़बानी ही किया था। उसने लाठी छोड़ी और वह निर्भय–निडर बना।



अब जात-पांत के, ऊंच-नीच के, सम्प्रदायों
के भेदभाव भूलकर सब एक हो जाइए।
मेल रखिए और निडर बनिए। घर में बैठकर
काम करने का समय नहीं है। बीती हुई
घड़ियां ज्योतिषी भी नहीं देखता।

शिक्षा

पाठक : आपने इतना सारा कहा, परन्तु उसमें कहीं भी शिक्षा की ज़रूरत तो बताई ही नहीं। हम शिक्षा की कमी की हमेशा शिकायत करते रहते हैं। लाज़िमी तालीम देने का आन्दोलन हम सारे देश में देखते हैं। महाराजा गायकवाड़ ने अपने राज्य में लाज़िमी शिक्षा शुरू की है। उसकी ओर सबका ध्यान गया है। हम उन्हें धन्यवाद देते हैं। यह सारी कोशिश क्या बेकार ही समझनी चाहिए?

संपादक : अगर हम अपनी सभ्यता को सबसे अच्छी मानते हैं, तब तो मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ेगा कि वह कोशिश ज्यादातर बेकार ही है। महाराजा साहब और हमारे दूसरे धुरन्धर नेता सबको तालीम देने की जो कोशिश कर रहे हैं, उसमें उनका हेतु निर्मल है। इसलिए उन्हें धन्यवाद ही देना चाहिए, लेकिन उनके हेतु का जो नतीजा आने की संभावना है, उसे हम छिपा नहीं सकते।

किसान ईमानदारी से खुद खेती करके रोटी कमाता है। उसे अपने माँ-बाप, अपनी स्त्री के साथ, बच्चों से कैसे पेश आना, जहां वह बसा हुआ है वहाँ उसकी चाल-ढाल कैसी होनी चाहिए, इन सबका उसे काफी ज्ञान है।

शिक्षा : तालीम का अर्थ क्या है? अगर उसका अर्थ सिर्फ़ अक्षर ज्ञान ही हो तो वह तो एक साधन जैसी ही हुई। उसका अच्छा उपयोग भी हो सकता है और बुरा उपयोग भी हो सकता है। एक शस्त्र से चीर-फाड़ करके बीमार को अच्छा किया जा सकता है और वही शस्त्र किसी की जान लेने के लिए भी काम में लाया जा सकता है।

अक्षर ज्ञान का भी ऐसा ही है। बहुत से लोग उसका बुरा उपयोग करते हैं, यह तो हम देखते ही हैं। उसका अच्छा उपयोग प्रमाण में कम ही लोग करते हैं। यह बात अगर ठीक है तो इससे यह साबित होता है कि अक्षर-ज्ञान से दुनिया को फायदे के बदले नुकसान ही हुआ है।

शिक्षा का साधारण अर्थ अक्षर ज्ञान ही होता है। लोगों को लिखना, पढ़ना और हिसाब करना सिखाना बुनियादी या प्राथमिक शिक्षा कहलाती है। एक किसान ईमानदारी से खुद खेती करके रोटी कमाता है। उसे मामूली तौर पर दुनियावी ज्ञान है। अपने माँ–बाप के साथ कैसे बरतना, अपनी स्त्री के साथ कैसे बरतना, बच्चों से कैसे पेश आना, जिस देहात में वह बसा हुआ है वहाँ उसकी चाल–ढाल कैसी होनी चाहिए, इन सबका उसे काफी ज्ञान है।

तालीम का अर्थ क्या है? अगर उसका अर्थ सिर्फ़ अक्षर ज्ञान ही हो तो वह तो एक साधन जैसी ही हुई। उसका अच्छा उपयोग भी हो सकता है और बुरा उपयोग भी हो सकता है। एक शस्त्र से चीर–फाड़ करके बीमार को अच्छा किया जा सकता है और वही शस्त्र किसी की जान लेने के लिए भी काम में लाया जा सकता है। अक्षर ज्ञान का भी ऐसा ही है। बहुत से लोग उसका बुरा उपयोग करते हैं, यह तो हम देखते ही हैं। उसका अच्छा उपयोग प्रमाण में कम ही लोग करते हैं।

वह नीति के नियम समझता है और उनका पालन करता है, लेकिन वह अपने दस्तखत करना नहीं जानता। इस आदमी को आप अक्षर ज्ञान देकर क्या करना चाहते हैं? उसके सुख में आप कौन सी बढ़ती करेंगे? क्या उसकी झोंपड़ी या उसकी हालत के बारे में आप उसके मन में असंतोष पैदा करना चाहते हैं? ऐसा करना हो तो भी उसे अक्षर ज्ञान देने की ज़रूरत नहीं है। पश्चिम के असर के नीचे आकर हमने यह बात चलायी है कि लोगों को शिक्षा देनी चाहिए, लेकिन उसके बारे में हम आगे–पीछे की बात सोचते ही नहीं।

अब ऊंची शिक्षा को लें। मैं भूगोल विद्या सीखा, खगोल विद्या सीखा, बीजगणित भी मुझे आ गया, रेखागणित का ज्ञान भी मैंने हासिल किया, भूगर्भ विद्या को भी मैं पी गया, लेकिन उससे क्या? उससे मैंने अपना कौन सा भला किया? अपने आसपास के लोगों का क्या भला किया? किस मकसद से मैंने वह ज्ञान हासिल किया? उससे मुझे क्या फायदा हुआ?

एक अंग्रेज विद्वान हक्सले ने शिक्षा के बारे में यों कहा है : ''उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह

उसके बस में रहता है, जिसका शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शुद्ध, शांत और न्यायदर्शी है।

उसने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इन्द्रियां उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनाएँ बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफ़रत है और जो दूसरों को अपने जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित माना जाएगा, क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।''

अगर यही सच्ची शिक्षा हो तो मैं कसम खाकर कहूँगा कि ऊपर जो शास्त्र मैंने गिनाये हैं उनका उपयोग मेरे शरीर या मेरी इन्द्रियों को बस में करने के लिए मुझे नहीं करना पड़ा। इसलिए प्राथमिक शिक्षा को लीजिये या ऊंची शिक्षा को लीजिये, उसका उपयोग मुख्य बात में नहीं होता। उससे हम मनुष्य नहीं बनते, उससे हम अपना कर्त्तव्य नहीं जान सकते।

उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके बस में रहता है, जिसका शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है।

पाठक : अगर ऐसा ही है, तो मैं आपसे एक सवाल करूँगा। आप ये जो सारी बातें कह रहे हैं, वह किसकी बदौलत कह रहे हैं? अगर आपने अक्षर ज्ञान और ऊंची शिक्षा नहीं पाई होती, तो ये सब बातें आप मुझे कैसे समझा पाते?

संपादक : आपने अच्छी सुनाई, लेकिन आपके सवाल का मेरा जवाब भी सीधा ही है। अगर मैंने ऊंची या नीची शिक्षा नहीं पाई होती, तो मैं नहीं मानता कि मैं निकम्मा आदमी हो जाता। अब ये बातें कहकर मैं उपयोगी बनने की इच्छा रखता हूँ। ऐसा करते हुए जो कुछ मैंने पढ़ा उसे मैं काम में लाता हूँ और उसका उपयोग, अगर वह उपयोगी हो तो, मैं अपने करोड़ों भाइयों के लिए नहीं कर सकता, सिर्फ़ आप जैसे पढ़े-लिखों के लिए ही कर सकता हूँ।

इससे भी मेरी ही बात का समर्थन होता है। मैं और आप दोनों गलत शिक्षा के पंजे में फँस गए थे। उसमें से मैं अपने को मुक्त हुआ मानता हूँ। अब वह

अनुभव मैं आपको देता हूँ और उसे देते समय ली हुई शिक्षा का उपयोग करके उसमें रही सड़न मैं आपको दिखाता हूँ।

इसके सिवा, आपने जो बात मुझे सुनाई उसमें आप गलती खा गये, क्योंकि मैंने अक्षर ज्ञान को बुरा नहीं कहा है। मैंने तो इतना ही कहा है कि उस ज्ञान की हमें मूर्ति की तरह पूजा नहीं करनी चाहिए। वह हमारी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह पर शोभा दे सकता है और वह जगह यह है : जब मैंने और आपने अपनी इन्द्रियों को बस में कर लिया हो, जब हमने नीति की नींव मजबूत बना ली हो, तब अगर हमें अक्षर ज्ञान पाने की इच्छा हो, तो उसे पाकर हम उसका अच्छा उपयोग कर सकते हैं। वह शिक्षा आभूषण के रूप में अच्छी लग सकती है, लेकिन अक्षर ज्ञान का अगर आभूषण के तौर पर ही उपयोग हो, तो ऐसी शिक्षा को लाज़िमी करने की हमें ज़रूरत नहीं। हमारे पुराने स्कूल ही काफ़ी हैं। वहां नीति को पहला स्थान दिया जाता है। वह सच्ची प्राथमिक शिक्षा है। उस पर हम जो इमारत खड़ी करेंगे वह टिक सकेगी।

उस ज्ञान की हमें मूर्ति की तरह पूजा नहीं करनी चाहिए। वह हमारी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह पर शोभा दे सकता है और वह जगह यह है : जब मैंने और आपने अपनी इन्द्रियों को बस में कर लिया हो, जब हमने नीति की नींव मजबूत बना ली हो, तब अगर हमें अक्षर ज्ञान पाने की इच्छा हो, तो उसे पाकर हम उसका अच्छा उपयोग कर सकते हैं। वह शिक्षा आभूषण के रूप में अच्छी लग सकती है, लेकिन अक्षर ज्ञान का अगर आभूषण के तौर पर ही उपयोग हो, तो ऐसी शिक्षा को लाज़िमी करने की हमें ज़रूरत नहीं। हमारे पुराने स्कूल ही काफ़ी हैं।

पाठक : तब क्या मेरा यह समझना ठीक है कि आप स्वराज्य के लिए अंग्रेजी शिक्षा का कोई उपयोग नहीं मानते?

संपादक : मेरा जवाब 'हाँ' और 'नहीं' दोनों है। करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी। उसने इसी इरादे से अपनी योजना बनाई थी, ऐसा मैं नहीं सुझाना चाहता, लेकिन उसके काम का नतीजा यही निकला है। यह कितने दु:ख की बात है कि हम स्वराज्य की बात भी पराई भाषा में करते हैं?

जिस शिक्षा को अंग्रेजों ने ठुकरा दिया है वह हमारा सिंगार बनती है, यह जानने लायक है। उन्हीं के विद्वान कहते रहते हैं कि उसमें यह अच्छा नहीं है, वह अच्छा नहीं है। वे जिसे भूल से गए हैं, उसी से हम अपने अज्ञान के कारण चिपके रहते हैं। उनमें अपनी-अपनी भाषा की उन्नति करने की कोशिश चल रही है। वेल्स इंग्लैंड का एक छोटा-सा परगना है, उसकी भाषा धूल जैसी नगण्य है। ऐसी भाषा का अब जीर्णोद्धार हो रहा है।

वेल्स के बच्चे वेल्श भाषा में ही बोलें, ऐसी कोशिश वहाँ चल रही हैं। इसमें इंग्लैण्ड के खजांची लॉयड जॉर्ज बड़ा हिस्सा लेते हैं और हमारी दशा कैसी है? हम एक-दूसरे को पत्र लिखते हैं तब गलत अंग्रेजी में लिखते हैं। एक साधारण एम.ए. पास आदमी भी ऐसी गलत अंग्रेजी से बचा नहीं होता। हमारे अच्छे से अच्छे विचार प्रगट करने का ज़रिया है अंग्रेजी, हमारी कांग्रेस का कारोबार भी अंग्रेजी में चलता है। अगर ऐसा लंबे अरसे तक चला तो मेरा मानना है कि आने वाली पीढ़ी हमारा तिरस्कार करेगी और उसका शाप हमारी आत्मा को लगेगा।

करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी। उसने इसी इरादे से अपनी योजना बनाई थी, ऐसा मैं नहीं सुझाना चाहता, लेकिन उसके काम का नतीजा यही निकला है। यह कितने दुःख की बात है कि हम स्वराज्य की बात भी पराई भाषा में करते हैं?

आपको समझना चाहिए कि अंग्रेजी शिक्षा लेकर हमने अपने राष्ट्र को गुलाम बनाया है। अंग्रेजी शिक्षा से दंभ, राग, जुल्म वगैरा बढ़े हैं। अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए लोगों ने प्रजा को ठगने में, उसे परेशान करने में कुछ भी कसर नहीं छोड़ रखी है। अब अगर हम अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए लोग उसके लिए कुछ करते हैं, तो उसका हम पर जो कर्ज़ चढ़ा हुआ है उसका कुछ हिस्सा ही हम अदा करते हैं। यह क्या कम जुल्म की बात है कि अपने देश में अगर मुझे इन्साफ़ पाना हो तो मुझे अंग्रेजी भाषा का उपयोग करना चाहिए। बैरिस्टर होने पर मैं स्वभाषा में बोल ही नहीं सकता! दूसरे आदमी को मेरे लिए तरजुमा कर देना चाहिए! यह कुछ कम दंभ है? यह गुलामी की हद नहीं तो और क्या है? इसमें मैं अंग्रेजों का दोष निकालूँ या अपना? हिन्दुस्तान को गुलाम बनाने

वाले तो हम अंग्रेजी जानने वाले लोग ही हैं। राष्ट्र की हाय अंग्रेजों पर नहीं पड़ेगी, बल्कि हम पर पड़ेगी।

लेकिन मैंने आपसे कहा कि मेरा जवाब 'हाँ' और 'ना' दोनों है। 'हाँ' कैसे सो मैंने आपको समझाया। अब 'ना' कैसे यह बताता हूँ। हम सभ्यता के रोग में ऐसे फँस गये हैं कि अंग्रेजी शिक्षा बिल्कुल लिये बिना अपना काम चला सकें ऐसा समय अब नहीं रहा। जिसने वह शिक्षा पाई है, वह उसका अच्छा उपयोग करे। अंग्रेजों के साथ के व्यवहार में, ऐसे हिन्दुस्तानियों के साथ के व्यवहार में जिनकी भाषा हम समझ न सकते हों और अंग्रेज खुद अपनी सभ्यता से कैसे परेशान हो गये हैं यह समझने के लिए अंग्रेजी का उपयोग किया जाए। जो लोग अंग्रेजी पढ़े हुए हैं उनकी संतानों को पहले तो नीति सिखानी चाहिए, उनकी मातृभाषा सिखानी चाहिए और हिन्दुस्तान की एक दूसरी भाषा सिखानी चाहिए।

अंग्रेजी शिक्षा लेकर हमने अपने राष्ट्र को गुलाम बनाया है। अंग्रेजी शिक्षा से दंभ, राग, जुल्म वगैरा बढ़े हैं। अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए लोगों ने प्रजा को ठगने में, उसे परेशान करने में कुछ भी कसर नहीं छोड़ रखी है। अब अगर हम अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए लोग उसके लिए कुछ करते हैं, तो उसका हम पर जो कर्ज चढ़ा हुआ है उसका कुछ हिस्सा ही हम अदा करते हैं। यह क्या कम जुल्म की बात है कि अपने देश में अगर मुझे इन्साफ़ पाना हो तो मुझे अंग्रेजी भाषा का उपयोग करना चाहिए। बैरिस्टर होने पर मैं स्वभाषा में बोल ही नहीं सकता!

बालक जब पक्की उम्र के हो जाएँ तब भले ही वे अंग्रेजी शिक्षा पाएँ और वह भी उसे मिटाने के इरादे से, न कि उसके ज़रिये पैसे कमाने के इरादे से। ऐसा करते हुए भी हमें यह सोचना होगा कि अंग्रेजी में क्या सीखना चाहिए और क्या नहीं सीखना चाहिए। कौन से शास्त्र पढ़ने चाहिए, यह भी हमें सोचना होगा। थोड़ा विचार करने से ही हमारी समझ में आ जाएगा कि अगर अंग्रेजी डिग्री लेना हम बन्द कर दें, तो अंग्रेज हाकिम चौंकेंगे।

पाठक : तब कैसी शिक्षा दी जाए?

संपादक : उसका जवाब ऊपर कुछ हद तक आ गया है। फिर भी इस सवाल पर हम और विचार करें। मुझे तो लगता है कि हमें अपनी सभी भाषाओं को

उज्ज्वल, शानदार बनाना चाहिए। हमें अपनी भाषा में ही शिक्षा लेनी चाहिए, इसके क्या मानी हैं, इसे ज्यादा समझाने का यह स्थान नहीं है। जो अंग्रेजी पुस्तकें काम की हैं, उनका हमें अपनी भाषा में अनुवाद करना होगा। बहुत से शास्त्र सीखने का दंभ और वहम हमें छोड़ना होगा। सबसे पहले तो धर्म की शिक्षा या नीति की शिक्षा दी जानी चाहिए। हर एक पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा का, हिन्दू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फ़ारसी का और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए। कुछ हिन्दुओं को अरबी और कुछ मुसलमानों और पारसियों को संस्कृत सीखनी चाहिए। उत्तरी और पश्चिमी हिन्दुस्तान के लोगों को तमिल सीखनी चाहिए। सारे हिन्दुस्तान के लिए जो भाषा चाहिए, वह तो हिन्दी ही होनी चाहिए। उसे उर्दू या नागरी लिपि में लिखने की छूट रहनी चाहिए। हिन्दू-मुसलमानों के संबंध ठीक रहें, इसलिए बहुत से हिन्दुस्तानियों का इन दोनों लिपियों को जान लेना ज़रूरी है। ऐसा होने से हम आपस के व्यवहार से अंग्रेजी को निकाल सकेंगे।

और यह सब किसके लिए ज़रूरी है? हम जो गुलाम बन गये हैं उनके लिए। हमारी गुलामी की वजह से देश की प्रजा गुलाम बनी है। अगर हम गुलामी से छूट जाएँ, तो प्रजा तो छूट ही जाएगी।

हिन्दुस्तान कभी नास्तिक नहीं बनेगा। हिन्दुस्तान की भूमि में नास्तिक फल-फूल नहीं सकते। बेशक, यह काम मुश्किल है। धर्म की शिक्षा का ख़्याल करते ही सिर चकराने लगता है। धर्म के आचार्य दंभी और स्वार्थी मालूम होते हैं। उनके पास पहुँचकर हमें नम्र भाव से उन्हें समझाना होगा। उसकी कुंजी मुल्लों, दस्तूरों और ब्राह्मणों के हाथ में है, लेकिन उनमें अगर सद्‌बुद्धि पैदा न हो, तो अंग्रेजी शिक्षा के कारण हममें जो जोश पैदा हुआ है उसका उपयोग करके हम लोगों को नीति की शिक्षा दे सकते हैं। यह कोई बहुत मुश्किल बात नहीं है। हिन्दुस्तानी सागर के किनारे पर ही मैल जमा है। उस मैल से जो गंदे हो गये हैं उन्हें साफ होना है।

पाठक : आपने जो धर्म की शिक्षा की बात कही वह बड़ी कठिन है।

संपादक : फिर भी उसके बिना हमारा काम नहीं चल सकता। हिन्दुस्तान कभी नास्तिक नहीं बनेगा। हिन्दुस्तान की भूमि में नास्तिक फल-फूल नहीं

सकते। बेशक, यह काम मुश्किल है। धर्म की शिक्षा का ख़्याल करते ही सिर चकराने लगता है।

धर्म के आचार्य दंभी और स्वार्थी मालूम होते हैं। उनके पास पहुँचकर हमें नम्र भाव से उन्हें समझाना होगा। उसकी कुंजी मुल्लों, दस्तूरों और ब्राह्मणों के हाथ में है, लेकिन उनमें अगर सद्बुद्धि पैदा न हो, तो अंग्रेजी शिक्षा के कारण हममें जो जोश पैदा हुआ है उसका उपयोग करके हम लोगों को नीति की शिक्षा दे सकते हैं। यह कोई बहुत मुश्किल बात नहीं है। हिन्दुस्तानी सागर के किनारे पर ही मैल जमा है। उस मैल से जो गंदे हो गये हैं उन्हें साफ होना है।

हम लोग ऐसे ही हैं और खुद ही बहुत कुछ साफ हो सकते हैं। मेरी यह टीका करोड़ों लोगों के बारे में नहीं है। हिन्दुस्तान को असली रास्ते पर लाने के लिए हमें ही असली रास्ते पर आना होगा। बाकी करोड़ों लोग तो असली रास्ते पर ही हैं। उसमें सुधार, बिगाड़, उन्नत्ति, अवनति समय के अनुसार होते ही रहेंगे। पश्चिम की सभ्यता को निकाल बाहर करने की ही हमें कोशिश करनी चाहिए। दूसरा सब अपने-आप ठीक हो जाएगा।



आत्म विश्वास रावण जैसा नहीं होना चाहिए जो समझता था कि मेरी बराबरी का कोई है नहीं। आत्म विश्वास होना चाहिए विभीषण जैसा, प्रह्लाद जैसा। उनके जी में यह भाव था कि हम निर्बल हैं मगर ईश्वर हमारे साथ है और हमारी शक्ति अनन्त है।

मशीनें

पाठक : आप पश्चिम की सभ्यता को निकाल बाहर करने की बात कहते हैं, तब तो आप यह भी कहेंगे कि हमें कोई भी मशीन नहीं चाहिए।

संपादक : मुझे जो चोट लगी थी उसे यह सवाल करके आपने ताजा कर दिया है। मि. रमेशचन्द्र दत्त की पुस्तक 'हिन्दुस्तान का आर्थिक इतिहास' जब मैंने पढ़ी, तब भी मेरी ऐसी हालत हो गई थी। उसका फिर से विचार करता हूँ, तो मेरा दिल भर आता है। मशीन की झपट लगने से ही हिन्दुस्तान पामाल हो गया है। मैन्चेस्टर ने हमें जो नुकसान पहुँचाया है, उसकी तो कोई हद ही नहीं है। हिन्दुस्तान से कारीगरी जो क़रीब-क़रीब खत्म हो गई, वह मैन्चेस्टर का ही काम है।

मुम्बई की मिलों में जो मजदूर काम करते हैं, वे गुलाम बन गए हैं, जो औरतें उनमें काम करती हैं, उनकी हालत देखकर कोई भी काँप उठेगा। जब मिलों की वर्षा नहीं हुई थी तब वे औरतें भूखों नहीं मरती थीं।

लेकिन मैं भूलता हूँ। मैन्चेस्टर को दोष कैसे दिया जा सकता है? हमने उसके कपड़े पहने तभी तो उसने कपड़े बनाए। बंगाल की बहादुरी का वर्णन जब मैंने पढ़ा तब मुझे हर्ष हुआ। बंगाल में कपड़े की मिलें नहीं हैं, इसलिए लोगों ने अपना असली धंधा फिर से हाथ में ले लिया। बंगाल मुम्बई की मिलों को बढ़ावा देता है वह ठीक ही है, लेकिन अगर बंगाल ने तमाम मशीनों से परहेज किया होता, उनका बहिष्कार किया होता तो और भी अच्छा होता।

मशीनें यूरोप को उजाड़ने लगी हैं और वहाँ की हवा अब हिन्दुस्तान में चल रही है। यंत्र आज की सभ्यता की मुख्य निशानी हैं और वह महापाप है, ऐसा मैं तो साफ देख सकता हूँ।

मुम्बई की मिलों में जो मजदूर काम करते हैं, वे गुलाम बन गये हैं, जो औरतें उनमें काम करती हैं, उनकी हालत देखकर कोई भी काँप उठेगा। जब मिलों की वर्षा नहीं हुई थी तब वे औरतें भूखों नहीं मरती थीं। मशीन की यह हवा अगर ज्यादा चली, तो हिन्दुस्तान की बुरी दशा होगी। मेरी बात आपको कुछ मुश्किल मालूम होती होगी, लेकिन मुझे कहना चाहिए कि हम हिन्दुस्तान में मिलें कायम करें, उसके बजाय हमारा भला इसी में है कि हम

मैन्चेस्टर को और भी रुपये भेजकर उसका सड़ा हुआ कपड़ा काम में लें, क्यों कि उसका कपड़ा काम में लेने से सिर्फ़ हमारे पैसे ही जाएँगे। हिन्दुस्तान में अगर हम मैन्चेस्टर कायम करेंगे तो पैसा हिन्दुस्तान में ही रहेगा, लेकिन वह पैसा हमारा खून चूसेगा, क्योंकि वह हमारी नीति को बिल्कुल खत्म कर देगा। जो लोग मिलों में काम करते हैं उनकी नीति कैसी है, यह उन्हीं से पूछा जाए। उनमें से जिन्होंने रुपये जमा किये हैं, उनकी नीति दूसरे पैसे वालों से अच्छी नहीं हो सकती। अमेरिका के रॉकफेलरों से हिन्दुस्तान के रॉकफेलर कुछ कम हैं, ऐसा मानना निरा अज्ञान है। गरीब हिन्दुस्तान तो गुलामी से छूट सकेगा, लेकिन अनीति से पैसे वाला बना हुआ हिन्दुस्तान गुलामी से कभी नहीं छूटेगा।

मुझे तो लगता है कि हमें यह स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजी राज्य को यहाँ टिकाये रखने वाले ये धनवान लोग ही हैं। ऐसी स्थिति में ही उनका स्वार्थ सधेगा। पैसा आदमी को दीन बना देता है। ऐसी दूसरी चीज दुनिया में विषय योग है। ये दोनों विषय विषमय हैं। उनका डंक साँप के डंक से ज्यादा ज़हरीला है। जब साँप काटता है तो हमारा शरीर लेकर हमें छोड़ देता है। जब पैसा या विषय काटता है तब वह शरीर, ज्ञान, मन सब कुछ ले लेता है, तो भी हमारा छुटकारा नहीं होता। इसलिए हमारे देश में मिलें कायम हों, इसमें खुश होने जैसा कुछ नहीं है।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजी राज्य को यहाँ टिकाये रखने वाले ये धनवान लोग ही हैं। ऐसी स्थिति में ही उनका स्वार्थ सधेगा। पैसा आदमी को दीन बना देता है। ऐसी दूसरी चीज दुनिया में विषय योग है। ये दोनों विषय विषमय हैं। जब पैसा या विषय काटता है तब वह शरीर, ज्ञान, मन सब कुछ ले लेता है।

पाठक : तब क्या मिलों को बन्द कर दिया जाए?

संपादक : यह बात मुश्किल है। जो चीज़ स्थायी या मज़बूत हो गई है, उसे निकालना मुश्किल है। इसीलिए काम शुरू न करना पहली बुद्धिमानी है। मिल मालिकों की ओर हम नफ़रत की निगाह से नहीं देख सकते। हमें उन पर दया करनी चाहिए। वे यकायक मिलें छोड़ दें, यह तो मुश्किल नहीं है, लेकिन हम उनसे ऐसी बिनती कर सकते हैं कि वे अपने इस साहस को बढ़ाएँ नहीं। अगर वे देश का भला करना चाहें, तो खुद अपना काम धीरे–धीरे कम कर सकते हैं। वे खुद पुराने, प्रौढ़, पवित्र चरखे देश के हजारों घरों में दाखिल कर सकते हैं और लोगों का बुना हुआ कपड़ा लेकर उसे बेच सकते हैं।

अगर वे ऐसा न करें तो भी लोग खुद मशीनों का कपड़ा इस्तेमाल करना बन्द कर सकते हैं।

पाठक : यह तो कपड़े के बारे में हुआ, लेकिन यंत्र की बनी तो अनेक चीजें हैं। वे चीजें या तो हमें परदेस से लेनी होंगी या ऐसे यंत्र हमारे देश में दाखिल करने होंगे।

संपादक : सचमुच हमारे देव (मूर्तियाँ) भी जर्मनी के यंत्रों में बनकर आते हैं, तो फिर दियासिलाई या ऑलपिन से लेकर काँच के झाड़-फानूस की तो बात ही क्या? मेरा अपना जवाब तो एक ही है। जब ये सब चीजें यंत्र से नहीं बनती थीं तब हिन्दुस्तान क्या करता था? वैसा ही वह आज भी कर सकता है। जब तक हम हाथ से ऑलपिन नहीं बनायेंगे तब तक उसके बिना हम अपना काम चला लेंगे। झाड़-फानूस को आग लगा देंगे। मिट्टी के दीये में तेल डालकर और हमारे खेत में पैदा हुई रुई की बत्ती बनाकर दीया जलाएँगे। ऐसा करने से हमारी आँखें खराब होने से बचेंगी, पैसे बचेंगे और हम स्वदेशी रहेंगे, बनेंगे और स्वराज्य की धूनी जगाएँगे।

यह सारा काम सब लोग एक ही समय में करेंगे या एक ही समय में कुछ लोग यंत्र की सब चीजें छोड़ देंगे, यह संभव नहीं है, लेकिन अगर यह विचार सही होगा, तो हम हमेशा शोध-खोज करते रहेंगे और हमेशा थोड़ी-थोड़ी चीजें छोड़ते जाएँगे। अगर हम ऐसा करेंगे तो दूसरे लोग भी ऐसा करेंगे। पहले तो यह विचार जड़ पकड़े यह ज़रूरी है, बाद में उसके मुताबिक काम होगा। पहले एक ही आदमी करेगा, फिर दस, फिर सौ-यों नारियल की कहानी की तरह लोग बढ़ते ही जाएँगे। बड़े लोग जो काम करते हैं, उसे छोटे भी करते हैं और करेंगे। समझें तो बात छोटी और सरल है। आपको और मुझे दूसरों के करने की राह नहीं देखना है। हम तो ज्यों ही समझ लें त्यों ही उसे शुरू कर दें। जो नहीं करेगा वह खोएगा। समझते हुए भी जो नहीं करेगा, वह निरा दंभी कहलायेगा।

एक ही समय में कुछ लोग यंत्र की सब चीजें छोड़ देंगे, यह संभव नहीं है, लेकिन अगर यह विचार सही होगा, तो हम हमेशा शोध-खोज करते रहेंगे और हमेशा थोड़ी-थोड़ी चीजें छोड़ते जाएँगे। अगर हम ऐसा करेंगे तो दूसरे लोग भी ऐसा करेंगे। पहले तो यह विचार जड़ पकड़े यह ज़रूरी है, बाद में उसके मुताबिक काम होगा। पहले एक ही आदमी करेगा।

पाठक : ट्रॉमगाड़ी और बिजली की बत्ती का क्या होगा?

संपादक : यह सवाल आपने बहुत देर से किया। इस सवाल में अब कोई जान नहीं रही। रेल ने अगर हमारा नाश किया है, तो क्या ट्रॉम नहीं करती? यंत्र तो साँप का ऐसा बिल है, जिसमें एक नहीं बल्कि सैकड़ों साँप होते हैं। एक के पीछे दूसरा लगा ही रहता है। जहाँ यंत्र होंगे वहाँ बड़े शहर होंगे। जहाँ बड़े शहर होंगे वहाँ ट्रॉमगाड़ी और रेलगाड़ी होगी, वहीं बिजली की बत्ती की ज़रूरत रहती है। आप जानते होंगे कि विलायत में भी देहातों में बिजली की बत्ती या ट्रॉम नहीं है। प्रामाणिक वैद्य और डॉक्टर आपको बताएँगे कि जहाँ रेलगाड़ी, ट्रॉमगाड़ी वगैरा साधन बढ़े हैं, वहाँ लोगों की तन्दुरुस्ती गिरी हुई होती है। मुझे याद है कि यूरोप के एक शहर में जब पैसे की तंगी हो गई थी तब ट्रॉमों, वकीलों और डॉक्टरों की आमदनी घट गयी थी, लेकिन लोग तन्दुरुस्त हो गये थे।

यंत्र का गुण तो मुझे एक भी याद नहीं आता, जबकि उसके अवगुणों से मैं पूरी किताब लिख सकता हूँ।

पाठक : यह सारा लिखा हुआ यंत्र की मदद से छापा जाएगा और उसकी मदद से बाँटा जाएगा, यह यंत्र का गुण है या अवगुण?

संपादक : यह 'ज़हर की दवा ज़हर है' की मिसाल है। इसमें यंत्र का कोई गुण नहीं है। यंत्र मरते-मरते कह जाता है कि 'मुझसे बचिये, होशियार रहिए, मुझसे आपको कोई फायदा नहीं होने का।' अगर ऐसा कहा जाए कि यंत्र ने इतनी ठीक कोशिश की, तो यह भी उन्हीं के लिए लागू होता है जो यंत्र की जाल में फँसे हुए हैं।

लेकिन मूल बात न भूलिएगा। मन में यह तय कर लेना चाहिए कि यंत्र खराब चीज है। बाद में हम उसका धीरे-धीरे नाश करेंगे। ऐसा कोई सरल रास्ता कुदरत ने ही बनाया नहीं है कि जिस चीज़ की हमें इच्छा हो वह तुरन्त मिल जाए। यंत्र के ऊपर हमारी मीठी नज़र के बजाय ज़हरीली नज़र पड़ेगी तो आख़िर वह जाएगा ही।



भारत में यदि कोई ग्रंथ झोंपड़ियों से महलों तक में स्थान पा सका है, तो वह तुलसीकृत रामायण है। भारतीय संस्कृति को अगर एक शब्द में वर्णित करना हो, तो वह शब्द है 'राम'।

छुटकारा

पाठक : आपके विचारों से ऐसा लगता है कि आप एक तीसरा ही पक्ष कायम करना चाहते हैं। आप एक्स्ट्रीमिस्ट भी नहीं हैं और मॉडरेट भी नहीं हैं।

संपादक : यहाँ आपकी भूल होती है। मेरे मन में तीसरे पक्ष का कोई ख़्याल नहीं है। सबके विचार एक से नहीं रहते। मॉडरेटों में भी सब एक ही विचार के हैं, ऐसा नहीं मानना चाहिए। जिसे लोगों की सेवा ही करनी है, उसके लिए पक्ष कैसा? मैं तो मॉडरेटों की सेवा करूँगा और एक्स्ट्रीमिस्टों की भी करूँगा। जहाँ उनके विचार से मेरी राय अलग पड़ेगी वहाँ मैं उन्हें नम्रता से बताऊंगा और अपना काम करता चलूँगा।

जो लोग उनके दबाव से चुप रहे होंगे वे लड़ेंगें, फोड़े को दबाकर रखने से कोई फायदा नहीं। उसे तो फूटना ही चाहिए। इसलिये अगर हमारे भाग्य में आपस में लड़ना ही लिखा होगा तो हम लड़ मरेंगे। उसमें कमज़ोर को बचाने के बहाने किसी दूसरे को बीच में पड़ने की ज़रूरत नहीं है। इसी से तो हमारा सत्यानाश हुआ है। इस तरह कमज़ोर को बचाना उसे और भी कमज़ोर बनाने जैसा है। मॉडरेटों को इस बात पर अच्छी तरह विचार करना चाहिए।

पाठक : अगर आप दोनों से कहना चाहें तो क्या कहेंगे?

संपादक : एक्स्ट्रीमिस्टों से मैं कहूँगा कि आपका हेतु हिन्दुस्तान के लिए स्वराज्य हासिल करने का है। स्वराज्य आपकी कोशिश से मिलने वाला नहीं है। स्वराज्य तो सबको अपने लिए पाना चाहिए और सबको उसे अपना बनाना चाहिए। दूसरे लोग जो स्वराज्य दिला दें वह स्वराज्य नहीं है, बल्कि परराज्य है। इसलिए सिर्फ़ अंग्रेजों को बाहर निकाला कि आपने स्वराज्य पा लिया, ऐसा अगर आप मानते हों तो वह ठीक नहीं है। सच्चा स्वराज्य जो मैंने पहले बताया वही होना चाहिए। उसे आप गोला–बारूद से कभी नहीं पायेंगे। गोला–बारूद हिन्दुस्तान को सधेगा नहीं। इसलिए सत्याग्रह पर ही भरोसा रखिए। मन में ऐसा शक भी पैदा न

होने दीजिए कि स्वराज्य पाने के लिए हमें गोला–बारूद की ज़रूरत है।

मॉडरेटों से मैं कहूँगा कि हम खाली आजिज़ी करना चाहें, यह तो हमारी हीनता होगी। उसमें हम अपना हल्कापन कुबूल करते हैं। 'अंग्रेजों से सम्बन्ध रखना हमारे लिए ज़रूरी है।' ऐसा कहना हमारे लिए, ईश्वर के चोर बनने जैसा हो जाता है। हमें ईश्वर के सिवा और किसी की ज़रूरत है, ऐसा कहना ठीक नहीं है और साधारण विचार करने से भी हमें लगेगा कि 'अंग्रेजों के बिना आज तो हमारा काम चलेगा ही नहीं,' ऐसा कहना अंग्रेजों को अभिमानी बनाने जैसा होगा।

स्वराज्य तो सबको अपने लिए पाना चाहिए और सबको उसे अपना बनाना चाहिए। दूसरे लोग जो स्वराज्य दिला दें वह स्वराज्य नहीं है, बल्कि पराज्य है।

अंग्रेज बोरिया–बिस्तर बाँधकर अगर चले जाएँगे, तो हिन्दुस्तान अनाथ हो जाएगा ऐसा नहीं मानना चाहिए। अगर वे गये तो संभव है कि जो लोग उनके दबाव से चुप रहे होंगे वे लड़ेगें, फोड़े को दबाकर रखने से कोई फायदा नहीं। उसे तो फूटना ही चाहिए। इसलिये अगर हमारे भाग्य में आपस में लड़ना ही लिखा होगा तो हम लड़ मरेंगे। उसमें कमज़ोर को बचाने के बहाने किसी दूसरे को बीच में पड़ने की ज़रूरत नहीं है। इसी से तो हमारा सत्यानाश हुआ है। इस तरह कमज़ोर को बचाना उसे और भी कमज़ोर बनाने जैसा है। मॉडरेटों को इस बात पर अच्छी तरह विचार करना चाहिए। इसके बिना स्वराज्य नहीं प्राप्त हो सकता। मैं उन्हें एक अंग्रेज पादरी के शब्दों की याद दिलाऊंगा: "स्वराज्य में अंधाधुंधी बरदाश्त की जा सकती है, लेकिन पराज्य की व्यवस्था हमारी कंगाली को बताती है।" सिर्फ़ उस पादरी के स्वराज्य का और हिन्दुस्तान के स्वराज्य का अर्थ अलग है। हम किसी का भी जुल्म या दबाव नहीं चाहते, चाहे वो गोरा हो या हिन्दुस्तानी हो। हम सबको तैरना सीखना और सिखाना है।

अगर ऐसा हो तो एक्स्ट्रमिस्ट और मॉडरेट दोनों मिलेंगे, मिल सकेंगे, दोनों को मिलना चाहिए दोनों को एक–दूसरे का डर रखने की या अविश्वास करने की ज़रूरत नहीं है।

पाठक : इतना तो आप दोनों पक्षों से कहेंगे, परन्तु अंग्रेजों से क्या कहेंगे?

संपादक : उनसे मैं विनय से कहूँगा कि आप हमारे राजा ज़रूर हैं। आप अपनी तलवार से हमारे राजा हैं या हमारी इच्छा से, इस सवाल की चर्चा मुझे

करने की ज़रूरत नहीं। आप हमारे देश में रहें इसका भी मुझे द्वेष नहीं है, लेकिन राजा होते हुए भी आपको हमारे नौकर बनकर रहना होगा। आपका कहा हमें नहीं, बल्कि हमारा कहा आपको करना होगा। आज तक आप इस देश से जो धन ले गये, वह भले आपने हज्म कर लिया, लेकिन अब आगे आपका ऐसा करना हमें पसन्द नहीं होगा। आप हिन्दुस्तान में सिपाहगिरी करना चाहें तो रह सकते हैं। हमारे साथ व्यापार करने का लालच आपको छोड़ना होगा। जिस सभ्यता की आप हिमायत करते हैं, उसे हम नुकसानदेह मानते हैं। अपनी सभ्यता को हम आपकी सभ्यता से कहीं ज्यादा ऊंची समझते हैं आपको भी ऐसा लगे तो उसमें आपका लाभ ही हैं, लेकिन ऐसा न लगे तो भी आपको, आपकी कहावत के मुताबिक, हमारे देश में हिन्दुस्तानी होकर रहना होगा। आपको ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए, जिससे हमारे धर्म को बाधा पहुँचे। राजकर्ता होने के नाते आपका फ़र्ज है कि हिन्दुओं की भावना का आदर करने के लिए आप गाय का माँस खाना छोड़ दें और मुसलमानों की खातिर बुरे जानवर (सुअर) का माँस खाना छोड़ दें। हम दब गये थे इसलिए बोल नहीं सके, लेकिन आप ऐसा न समझें कि आपके इस बर्ताव से हमारी भावनाओं को चोट नहीं पहुँची है। हम स्वार्थ या दूसरे भय से आज तक कह नहीं सके, लेकिन अब यह कहना हमारा फ़र्ज हो गया है। हम मानते हैं कि आपकी क़ायम की हुई शालाएँ और अदालतें हमारे किसी काम की नहीं हैं। उनके बजाय हमारी पुरानी असली शालाएँ और अदालतें ही हमें चाहिए।

स्वराज्य में अंधाधुंधी बरदाश्त की जा सकती है, लेकिन परराज्य की व्यवस्था हमारी कंगाली को बताती है।'' सिर्फ़ उस पादरी के स्वराज्य का और हिन्दुस्तान के स्वराज्य का अर्थ अलग है। हम किसी का भी जुल्म या दबाव नहीं चाहते, चाहे वो गोरा हो या हिन्दुस्तानी हो। हम सबको तैरना सीखना और सिखाना है।

हिन्दुस्तान की आम भाषा अंग्रेजी नहीं बल्कि हिन्दी है। वह आपको सीखनी होगी और हम तो आपके साथ अपनी भाषा में ही व्यवहार करेंगे।

आप रेलवे और फ़ौज के लिए बेशुमार रुपये ख़र्च करते हैं, यह हमसे देखा नहीं जाता। हमें उसकी ज़रूरत नहीं मालूम होती। रूस का डर आपको होगा, हमें नहीं है। रूसी आएँगे तब हम उनसे निबट लेंगे, आप होंगे तो हम दोनों मिलकर उनसे निबट लेंगे। हमें विलायती या यूरोपीय कपड़ा नहीं चाहिए। इस देश में पैदा होने वाली चीजों से ही हम अपना काम चला लेंगे।

आपकी एक आँख मैन्चेस्टर पर और दूसरी हम पर रहे, यह अब नहीं पुसायेगा। आपका और हमारा स्वार्थ एक ही है, इस तरह आप बरतेंगे तभी हमारा साथ बना रह सकता है।

हम दब गये थे इसलिए बोल नहीं सके, लेकिन आप ऐसा न समझें कि आपके इस बरताव से हमारी भावनाओं को चोट नहीं पहुँची है। हम स्वार्थ या दूसरे भय से आज तक कह नहीं सके, लेकिन अब यह कहना हमारा फ़र्ज हो गया है।

आपसे यह सब हम बेअदबी से नहीं कह रहे हैं। आपके पास हथियार-बल है, भारी जहाजी सेना है। उसके खिलाफ़ वैसी ही ताक़त से हम नहीं लड़ सकते, लेकिन आपको अगर ऊपर कही गई बात मंजूर न हो, तो आपसे हमारी नहीं बनेगी। आपकी मर्ज़ी में आये तो और मुमकिन हो तो आप हमें तलवार से काट सकते हैं, मर्ज़ी में आये तो हमें तोप से उड़ा सकते हैं। हमें जो पसंद नहीं है वह अगर आप करेंगे, तो हम आपकी मदद नहीं करेंगे और बगैर हमारी मदद के आप एक कदम भी नहीं चल सकेंगे।

संभव है कि अपनी सत्ता के मद में हमारी इस बात को आप हँसी में उड़ा दें। आपका हँसना बेकार है, ऐसा आज शायद हम नहीं दिखा सकें, लेकिन अगर हममें कुछ दम होगा तो आप देखेंगे कि आपका मद बेकार है और आपका हँसना विनाश की निशानी है।

हम मानते हैं कि आप स्वभाव से धार्मिक राष्ट्र की प्रजा हैं। हम तो धर्म स्थान में ही बसे हुए हैं। आपका और हमारा कैसे साथ हुआ, इसमें उतरना फ़िज़ूल है, लेकिन अपने इस सम्बन्ध का हम दोनों अच्छा उपयोग कर सकते हैं।

आप हिन्दुस्तान में आने वाले जो अंग्रेज हैं वे अंग्रेज प्रजा के सच्चे नमूने नहीं हैं और हम जो आधे अंग्रेज जैसे बन गये हैं वे भी सच्ची हिन्दुस्तानी प्रजा के नमूने नहीं कहे जा सकते। अंग्रेज प्रजा को अगर आपकी करतूतों के बारे में सब मालूम हो जाए, तो वह आपके कामों के ख़िलाफ़ हो जाए। हिन्द की प्रजा ने तो आपके साथ संबंध थोड़ा ही रखा है। आप अपनी सभ्यता को, जो दरअसल बिगाड़ करने वाली है, छोड़कर अपने धर्म की छानबीन करेंगे, तो आपको लगेगा कि हमारी माँग ठीक है। इसी तरह आप हिन्दुस्तान में रह सकते हैं। अगर उस ढंग से आप यहाँ रहेंगे तो आपसे हमें जो थोड़ा सीखना है वह हम सीखेंगे और हमसे आपको जो बहुत सीखना है वह आप

सीखेंगे। इस तरह हम एक–दूसरे से लाभ उठायेंगे और सारी दुनिया को लाभ पहुँचायेंगे, लेकिन यह तो तभी हो सकता है जब हमारे संबंध की जड़ धर्म क्षेत्र में जमे।

पाठक : राष्ट्र से आप क्या कहेंगे?

संपादक : राष्ट्र कौन?

पाठक : अभी तो आप जिस अर्थ में यह शब्द काम में लेते हैं उसी अर्थ वाला राष्ट्र यानी जो लोग यूरोप की सभ्यता में रंगे हुए हैं, वो स्वराज्य की आवाज़ उठा रहे हैं।

संपादक : इस राष्ट्र से मैं कहूँगा कि जिस हिन्दुस्तानी को स्वराज्य की सच्ची खुमारी यानी मस्ती चढ़ी होगी, वही अंग्रेजों से ऊपर की बात कह सकेगा और उनके रौब से नहीं दबेगा।

हम मानते हैं कि आपकी क़ायम की हुई शालाएँ और अदालतें हमारे किसी काम की नहीं हैं। उनके बजाय हमारी पुरानी असली शालाएँ और अदालतें ही हमें चाहिए।

सच्ची मस्ती तो उसी को चढ़ सकती है, जो ज्ञान पूर्वक समझ बूझकर यह मानता हो कि हिन्द की सभ्यता सबसे अच्छी है और यूरोप की सभ्यता चार दिन की चाँदनी है। वैसे सभ्यताएँ तो आज तक कई हो गयीं और मिट्टी में मिल गयीं, आगे भी कई होंगी और मिट्टी में मिल जाएँगी।

सच्ची खुमारी उसी को हो सकती है, जो आत्मबल अनुभव करके शरीर बल से नहीं दबेगा और निडर रहेगा तथा सपने में भी तोप बल का उपयोग करने की बात नहीं सोचेगा।

सच्ची खुमारी उसी हिन्दुस्तानी को रहेगी, जो आज की लाचार हालत से बहुत ऊब गया होगा और जिसने पहले से ही ज़हर का प्याला पी लिया होगा। ऐसा हिन्दुस्तानी अगर एक ही होगा तो वह भी ऊपर की बात अंग्रेजों से कहेगा और अंग्रेजों को उसकी बात सुननी पड़ेगी।

ऊपर की माँग माँग नहीं है, वह हिन्दुस्तानियों के मन की दशा को बताती है। माँगने से कुछ नहीं मिलेगा, वह तो हमें खुद लेना होगा। उसे लेने की हममें ताक़त होनी चाहिए। यह ताक़त उसी में होगी :

- जो अंग्रेजी भाषा का उपयोग लाचारी से ही करेगा।
- जो वकील होगा तो अपनी वकालत छोड़ देगा और खुद घर में चरखा चलाकर कपड़े बुन लेगा।

- जो वकील होने के कारण अपने ज्ञान का उपयोग सिर्फ़ लोगों को समझाने और लोगों की आँखें खोलने में करेगा।
- जो वकील होकर वादी-प्रतिवादी, मुद्दई और मुद्दालेह के झगड़ों में नहीं पड़ेगा, अदालतों को छोड़ देगा और अपने अनुभव से दूसरों को अदालतें छोड़ने के लिए समझाएगा।
- जो वकील होते हुए भी जैसे वकालत छोड़ेगा वैसे न्यायाधीशपन भी छोड़ेगा।
- जो डॉक्टर होते हुए भी अपना पेशा छोड़ेगा और समझेगा कि लोगों की चमड़ी चोंथने के बजाय बेहतर है कि उनकी आत्मा को छुआ जाए और उसके बारे में शोध-खोज करके उन्हें तंदुरुस्त बनाया जाए।
- जो डॉक्टर होने से समझेगा कि खुद चाहे जिस धर्म का हो, लेकिन अंग्रेजी फार्मेसियों में जीवों पर जो निर्दयता की जाती है, वैसी निर्दयता से बनी हुई दवाओं से शरीर को चंगा करने के बजाय बेहतर है कि शरीर रोगी रहे।
- जो डॉक्टर होने पर भी खुद चरखा चलायेगा और जो लोग बीमार होंगे उन्हें उनकी बीमारी का सही कारण बताकर उसे दूर करने के लिए कहेगा, निकम्मी दवाएँ देकर उन्हें गलत लाड़ नहीं लड़ायेगा। वह तो यही समझेगा कि निकम्मी दवाएँ न लेने से बीमार की देह अगर गिर भी जाए, तो उससे दुनिया अनाथ नहीं हो जाएगी और यही मानेगा कि उसने बीमार पर सच्ची दया की है।
- जो धनी होने पर भी धन की परवाह किये बिना अपने मन में होगा वही कहेगा और बड़े से बड़े सत्ताधीश की भी परवाह न करेगा।
- जो धनी होने से अपना रुपया चरखे चालू करने में खरचेगा और खुद सिर्फ़ स्वदेशी माल का इस्तेमाल करके दूसरों को भी ऐसा करने के लिए बढ़ावा देगा।
- दूसरे हर हिन्दुस्तानी की तरह जो यह समझेगा कि यह समय पश्चाताप का, प्रायश्चित्त का और शोक का है।
- जो दूसरे हर हिन्दुस्तानी की तरह यह समझेगा कि अंग्रेजों का क़ुसूर निकालना बेकार है। हमारे क़ुसूर की वजह से वे हिन्दुस्तान में आये, हमारे क़ुसूर के कारण ही वे यहां रहते हैं और हमारा क़ुसूर दूर होगा तब वे यहाँ

से चले जाएँगे या बदल जाएँगे।

- दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह जो यह समझेगा कि मातम के वक्त मौज-शौक नहीं हो सकते। जब तक हमें चैन नहीं है तब तक हमारा जेल में रहना या देश निकाला भोगना ही ठीक है।
- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि लोगों को समझाने के बहाने जेल में न जाने की खबरदारी रखना निरा मोह है।
- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि कहने से करने का असर अद्‌भुत होता है, हम निडर होकर जो मन में है वही कहेंगे और इस तरह कहने का जो नतीजा आये उसे सहेंगे, तभी हम अपने कहने का असर दूसरों पर डाल सकेंगे।
- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि हम दु:ख सहन करके ही बंधन यानी गुलामी से छूट सकेंगे।
- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि अंग्रेजों की सभ्यता को बढ़ावा देकर हमने जो पाप किया है, उसे धो डालने के लिए अगर हमें मरने तक भी अंडेमान में रहना पड़े, तो वह कुछ ज्यादा नहीं होगा।

स्वराज्य की सच्ची खुमारी उसी को हो सकती है, जो आत्मबल अनुभव करके शरीर बल से नहीं दबेगा और निडर रहेगा तथा सपने में भी तोप बल का उपयोग करने की बात नहीं सोचेगा। सच्ची खुमारी उसी हिन्दुस्तानी को रहेगी, जो आज की लाचार हालत से बहुत ऊब गया होगा और जिसने पहले से ही ज़हर का प्याला पी लिया होगा।

- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि कोई भी राष्ट्र दु:ख सहन किये बिना ऊपर चढ़ा नहीं है। लड़ाई के मैदान में भी दु:ख ही कसौटी होता है, न कि दूसरे को मारना। सत्याग्रह के बारे में भी ऐसा ही है।
- जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि यह कहना कुछ न करने के लिए एक बहाना भर है कि 'जब सब लोग करेंगे तब हम भी करेंगे'। हमें ठीक लगता है इसलिए हम करें, जब दूसरों को ठीक लगेगा तब वे करेंगे, यही करने का सच्चा रास्ता है। अगर मैं स्वादिष्ट भोजन देखता हूँ, तो उसे खाने के लिए दूसरे की राह नहीं देखता। ऊपर कहे मुताबिक प्रयत्न करना, दु:ख सहना यह स्वादिष्ट भोजन है। ऊब कर लाचारी से करना या दु:ख सहना निरी बेगार है।

पाठक : सब ऐसा कब करेंगे और कब उसका अंत आयेगा?

संपादक : आप फिर भूलते हैं। सबकी न तो मुझे परवाह है, न आपको होनी चाहिए। 'आप अपना देख लीजिए, मैं अपना देख लूँगा' यह स्वार्थ वचन माना जाता है, लेकिन यह परमार्थ वचन भी है। मैं अपना उजालूँगा, अपना भला करूँगा, तभी दूसरे का भला कर सकूँगा। अपना कर्त्तव्य मैं कर लूँ, इसी में काम की सारी सिद्धियाँ समाई हुई हैं। आपको विदा करने से पहले फिर एक बार मैं यह दोहराने की इजाज़त चाहता हूँ कि :

- अपने मन का राज्य स्वराज्य है।
- उसकी कुंजी सत्याग्रह, आत्मबल या करुणा बल है।
- उस बल को आजमाने के लिए स्वदेशी को पूरी तरह अपनाने की ज़रूरत है।
- हम जो करना चाहते हैं वह अंग्रेजों के लिए हमारे मन में द्वेष है इसलिए या उन्हें सज़ा देने के लिए नहीं करें, बल्कि इसलिए करें कि ऐसा करना हमारा कर्त्तव्य है। मतलब यह कि अंग्रेज अगर नमक महसूल रद्द कर दें, लिया हुआ धन वापस कर दें, सब हिन्दुस्तानियों को बड़े-बड़े ओहदे दे दें और अंग्रेजी लश्कर हटा लें, तो हम उनकी मिलों का कपड़ा पहनेंगे या अंग्रेजी भाषा काम में लायेंगे या उनके हुनर का उपयोग करेंगे सो बात नहीं है। हमें यह समझना चाहिए कि वह सब दरअसल नहीं करने जैसा है, इसलिए हम उसे नहीं करेंगे। मैंने जो कुछ कहा है वह अंग्रेजों के लिए द्वेष होने के कारण नहीं, बल्कि उनकी सभ्यता के लिए द्वेष होने के कारण कहा है।

मुझे लगता है कि हमने स्वराज्य का नाम तो लिया, लेकिन उसका स्वरूप हम नहीं समझे हैं। मैंने उसे जैसा समझा है वैसा यहाँ बताने की कोशिश की है।

मेरा मन गवाही देता है कि ऐसा स्वराज्य पाने के लिए मेरा यह शरीर समर्पित है।



भविष्य में लोग इस आधार पर हमारा मूल्यांकन
नहीं करेंगे कि हम किस सिद्धांत का दावा करते हैं
या कौन सा 'लेबल' धारण करते हैं या कौन से नारे
लगाते हैं, हमारा मूल्यांकन वे हमारे उद्यम, त्याग, ईमानदारी
और चरित्र की शुद्धता से करेंगे। वे जानना चाहेंगे
कि हमने वास्तव में उनके लिए क्या किया है।
लेकिन अगर आप नहीं सुनेंगे, अगर आप लोगों के
मौजूदा दु:ख और असंतोष से लाभ उठाकर
उसे दलीय स्वार्थों के लिए बढ़ाएंगे और उसका
दुरुपयोग करेंगे, तो यह दु:ख और असंतोष पलट कर
आपके ही सिर पर पड़ेगा और जनता से
इस विश्वासघात के लिए ईश्वर भी
आपको क्षमा नहीं करेगा।